आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

जून 2025

क्रान्ति

मासिक

सहयोग राशि
30/-₹

युद्ध के कोलाहल में गुम न हो जाए न्याय का प्रश्न

"भलाई और बुराई समान नहीं है। तुम (बुरे आचरण की बुराई को) अच्छे से अच्छे आचरण के द्वारा दूर करो। फिर क्या देखोगे कि वही व्यक्ति, तुम्हारे और जिसके बीच बैर पड़ा हुआ था, जैसे वह कोई घनिष्ठ मित्र है।"

(क़ुरआन, 41:34)

A Well Wisher

J.I.H, Beerpur,
Bhim Nagar, Supaul, Bihar

Website Link :
www.kantimasik.com

संपादक
शिब्ली अरसलान
abuaniqa@gmail.com

प्रबंधक
नईम ख़ान
+91 9891160829

सहयोग राशि
एक प्रति 30/- रु॰ एक वर्ष 350/- रु॰
पांच वर्ष 1500/- रु॰ आजीवन रु॰ 5000/-
सऊदी अरब और खाड़ी के देशों के लिए 110/- रियाल
यूरोप व अमेरिका के लिए 40/- US डॉलर

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए सम्पर्क करें :

कार्यालय :
कान्ति मासिक, डी-314, दावत नगर,
अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर,
ओखला, नई दिल्ली-110025

हेल्पलाइन न॰
9818799223

Account Detail
NAME : KANTI
A/C NO : 0990839195
IFS CODE : IDIB000J029
TYPE : CURRENT
BANK : INDIAN BANK
BRANCH : JAMIA MILLIA ISLAMIA
NEW DELHI - 110025
चेक / ड्राफ्ट 'कान्ति' के नाम से बनवाएं

प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत ट्रस्ट (रजि॰), डी-314 दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर, नई दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं
Printer : Akhilesh Singh
Press : AARYA PRINTERS
201, Ground Floor, DSIDC Complex
Okhla Industrial Area phase-1,
New Delhi-110020
Editor : Shibli Arsalan

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित है।

वर्ष 34 अंक 12 जून 2025

आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब



कान्ति मासिक

इस अंक में

मूल प्रश्न 04
पहलगाम : सियासत, सनसनी और सुलगते सवाल
शिब्ली अरसलान

चिंतन 07
कर्म की दिशा और धर्म का मार्गदर्शन
रिज़वान अहमद

सौंदर्य बोध 11
संघर्ष और धैर्य : जीवन का सार्थक दृष्टिकोण
जावेद इक़बाल

मुख्य स्तंभ 15
भारत-पाक तनाव :युद्ध के कोलाहल में गुम न हो जाए न्याय का प्रश्न
सुफ़ियान अहमद

अभिमत 18
आम आदमी को कितनी चुकानी पड़ती है युद्धों की क़ीमत ?
आलोक जोशी

समाधान 21
हरेक जान का हो सम्मान
लुबना सबूब

कविता 23
जंग न होने देंगे
अटल बिहारी बाजपेयी

समसामयिक 24
जाति जनगणना और सामाजिक न्याय का सवाल
जितेंद्र गौतम

विचार 27
सांप्रदायिकता की प्रयोगशाला : पहलगाम, मीडिया और बहुसंख्यकवाद
अभय कुमार

दृष्टिकोण 31
मणिपुर से कश्मीर तक, 'शांति एक खोज'
संपादन प्रभाग

शिक्षा 33
ई-लर्निंग और बदलता शैक्षिक परिदृश्य
डॉ. प्रदीप कुमार

प्रकाश स्तंभ 36
संभावनाओं का क्षितिज
अबरार हसन

सेहत 38
भीषण गर्मी में सेहतमंद रहने के आसान उपाय
संपादन प्रभाग

करियर 41
ऑनलाइन जॉब में करियर को दें नई दिशा
संपादन प्रभाग

कहानी 44
'आई' और 'एआई' के बीच एक अनदेखी कड़ी
सुफ़ियान अहमद

आख़िरी पन्ना 48
चेतना, विवेक और नैतिक बोध
सायेमा हुसैन

मूल प्रश्न



शिब्ली अरसलान

पहलगाम : सियासत, सनसनी और सुलगते सवाल

कश्मीर के पहलगाम में प्रसिद्ध पर्यटन स्थल के पास हुआ आतंकी हमला, जिसमें छब्बीस पर्यटक मारे गए, हिंसा और आतंकवाद के विनाशकारी प्रभाव की याद दिलाता है। आतंकवादी हमला सिर्फ़ एक अपराध नहीं है—यह एक नैतिक तबाही है जो मानवता के मूल तत्व का मज़ाक़ उड़ाती है। 26 निर्दोष लोगों की जान, निहत्थे और बेख़बर, एक ऐसे बर्बर कृत्य में समाप्त कर दी गई जिसे शब्दों में बयां करना मुश्किल है।



पहलगाम हिंसा, देश में आतंकवादी घटनाओं के इतिहास में सबसे विभत्स घटना है। इसलिए विभत्स नहीं कि इसमें 26 आम शहरियों की जानें गयीं। आम शहरियों पर ये पहला आतंकी हमला नहीं है, इससे पहले कश्मीर सहित देश के अन्य हिस्सों में ऐसी घटनाओं के घटित होने की एक श्रृंखला है। ये घटना इसलिए क्रूरतम और घिनौनी है कि इसमें आतंकियों द्वारा बंदूक़ की नोक पर 'कलमा' पढ़ने को कहा गया और फिर गोली मारी गयी। इसलिए इसमें षड्यंत्र का गुमान भी होता है, वैसे सही बात ये है कि हर आतंकी घटना साज़िश होती है मानवता के विरुद्ध। बिना साज़िशी मानसिकता और योजना के ऐसा जघन्य अपराध मुमकिन नहीं। साज़िशकर्ताओं और योजनाकारों का धार्मिक विश्वास कुछ भी हो, इससे कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ता। वे यदि इस्लाम के नामलेवा हैं तो क्या उनके पास इस कुकृत्य के लिए कोई दलील हो सकती है? क़तई नहीं...वो 'कलमा' जिसमें ईश्वर का परिचय यूं कराया गया है कि वो सबका रचयिता और पालनहार है, ईश्वर एक है, वो सबका ईश्वर है तो फिर किस बात की पूछ-गछ? क्या मंशा हो सकती है 'कलमा' पूछने के पीछे? क्या पहलगाम घूमने आये सैलानियों का रचयिता और पालनहार कोई और है? वास्तव में ये कलमा की तौहीन है। कलमा के अर्थ और मर्म को समझने वाला हर आस्थावान ये सुनकर व्यथित होगा।

इसलिए सारे धर्म गुरु और धार्मिक स्कॉलर एक मत से ये बात कहते हैं कि आतंकवाद का धर्म से कोई संबंध नहीं होता, आतंकवादी न हिंदू होता है और न मुसलमान, वो केवल आतंकवादी होता है। धर्म का दुरुपयोग आतंकवाद को धर्म से जोड़ता है। ऐसी हिंसा के लिए धर्म का हवाला आस्था की पवित्रता को अपवित्र करना है। यह आस्था की अभिव्यक्ति नहीं थी—यह उसके साथ विश्वासघात था। कायरता की आड़ में अपराधियों ने पूरे देश की अंतरात्मा को घायल कर दिया है।

दुनिया भर में आतंकवादी विभिन्न धार्मिक विश्वासों से स्वयं को जोड़ते रहे हैं। आयरिश रिपब्लिकन आर्मी, एलटीटीई, ख़ालिस्तान लिबरेशन फ्रंट, उल्फा आदि इसके उदाहरण हैं।

श्रीलंका के बौद्ध भिक्षु तलदुवे सोमारामा थेरो ने प्रधानमंत्री की हत्या की और एंडर्स बेहरिंग ब्रेविक ने 2011 में नॉर्वे में 86 युवकों की हत्या की।

जब स्कॉलर्स ये कहते हैं कि आतंकवाद का कोई मज़हब नहीं होता तो ऐसा कहते हुए स्कॉलर्स की मान्यता ये होती है कि धर्म की बुनियादी अवधारणा मानवता के संबंध में ये है कि समस्त मानव और धरती के सारे जीवधारी एक परिवार हैं, इसे ही सनातनी परम्परा में 'वसुधैव कुटुंबकम्' कहा जाता है और इस्लामी शिक्षा में 'अल-ख़ल्क़ु अयालुल्लाह' कहते हैं। धार्मिक व्यक्ति ख़ुदापरस्त (ईश्वर भक्त) होता है और ईश्वर की सच्ची भक्ति करने वाला इंसान पूरी मानव बिरादरी को ईश्वर का कुनबा समझता है। अपने ही कुनबे के विरुद्ध साज़िश और नफ़रत कैसी!!

जहां तक इस्लाम की बात है तो ये सर्वविदित है कि इस्लाम में आतंकवाद की स्पष्ट रूप से निंदा की गई है। इस्लामी शिक्षाएं उग्रवाद और हिंसा का मुक़ाबला करने के लिए शांति, समझ, सहिष्णुता और एकजुटता को प्रभावी तरीक़े से बढ़ावा देने की बात करती हैं। कोई आतंकवादी चाहे कितनी भी श्रद्धा से नमाज़ और रोज़ा क्यों न रखे, वे ईश्वर की नज़र में अक्षम्य अपराधी माने जाएंगे।

इस्लाम के अनुसार, आदर्श राज्य सुरक्षा और स्थिरता वाला होता है, भले ही वह ग़ैर-मुस्लिम शासक द्वारा प्रदान किया गया हो। जैसा कि पैग़म्बर ने अपने साथियों से कहा था जब वे मक्का में कठिन समय से गुज़र रहे थे : "आप अबीसीनिया अथवा इथोपिया की भूमि पर जा सकते हैं, वहां एक राजा है जिसके शासन में लोग सुरक्षित हैं,"

ईश्वर के अन्तिम दूत का ये फ़रमान दर्शाता है कि इस्लाम ऐसी किसी भी चीज़ को अस्वीकार करता है जो सामाजिक शांति को नष्ट करती है, लोगों को आतंकित करती है, या निर्दोष लोगों की जान लेती है—चाहे अपराधी मुसलमान ही क्यों न हो—और यह मानता है कि शांतिपूर्ण समाज की स्थापना प्रशंसनीय है, भले ही उसका संरक्षक कोई ग़ैर-मुस्लिम क्यों न हो।

अंत में,

किसी आतंकी घटना पर हम कुछ तात्कालिक विधवा विलाप, शोर-शराबा और सरकारों द्वारा आक्रामक तेवर दिखा कर संतुष्ट हो जाते हैं। ऐसा लगता है कि इस अत्यंत गंभीर मुद्दे पर हम गंभीरतापूर्वक ग़ौर करना नहीं चाहते। राजनेता चुनावी रोटी सेंक कर फ़ारिग़ हो जाते हैं, हमारा सनसनी मीडिया पड़ोसी देश पर उन्मादी तेवर दिखा कर इतिश्री कर लेता है। पहलगाम के बाद हिन्द व पाक में छिड़ी जंग पर 'सीज़फायर' के बाद प्रधानमंत्री का "राष्ट्र के नाम संबोधन" में पाकिस्तान को धूल चटाने, उसे बुरी तरह पीटने, उनका घमंड तोड़ने, पाकिस्तान के साथ बात न करने, आतंक पर ज़ीरो टॉलरेंस, सीज़फ़ायर के लिए पाकिस्तान द्वारा गुहार लगाने जैसे कुछ "मास्टर स्ट्रोक" जुमलों से भरा हुआ था यानी प्रधानमंत्री ये मान कर चल रहे थे कि इस प्रकार की भाषा और आक्रामकता से देश की जनता संतुष्ट होती है। मेरा मासूम-सा सीधा सवाल ये है कि आख़िर हम देश की जनता ऐसे क्यों हैं कि पाकिस्तान पर इस प्रकार की डायलॉगबाज़ी से हम संतुष्ट हो जाते हैं या हमारे राजनेता ये समझने लगते हैं कि हमारी संतुष्टि के लिए बस इतना ही काफ़ी है।

जब स्कॉलर्स ये कहते हैं कि आतंकवाद का कोई मज़हब नहीं होता तो ऐसा कहते हुए स्कॉलर्स की मान्यता ये होती है कि धर्म की बुनियादी अवधारणा मानवता के संबंध में ये है कि समस्त मानव और धरती के सारे जीवधारी एक परिवार हैं, इसे ही सनातनी परम्परा में 'वसुधैव कुटुंबकम्' कहा जाता है और इस्लामी शिक्षा में 'अल-ख़ल्क़ु अयालुल्लाह' कहते हैं।

पिछले कई दशक से आतंकवादी हमलों की वजह से हमारे मासूम बच्चे और बेगुनाह मर्द व औरत बहुत बड़ी संख्या में अपनी जान गंवा चुके हैं, सैकड़ों फ़ौजी शहीद हो चुके हैं, हम आतंकवाद पर गंभीर क्यों नहीं होते? आज तक किसी आतंकी घटना पर चाहे वो सिविलियन पर अटैक हो या सुरक्षाबलों पर, कोई साइंटिफिक स्टडी रिपोर्ट सामने नहीं आई जो कि इस दिशा में पहला क़दम है। पुलवामा का रहस्य आज तक नहीं खुला, हां उस पर वोट की रोटी ख़ूब सेंकी गयी। हम कितने भोले हैं कि इस प्रकार की भाषायी आक्रामकता पर संतुष्ट हो जाते हैं। आतंकवाद और आतंकी घटना पर खुलकर अपनी सरकार और अपने राजनेताओं से बेहद बुनियादी सवाल नहीं कर पाते हैं और न ही इसके कारणों और निदान पर कोई देशव्यापी गंभीर चर्चा और विमर्श हो पाता है।

क्या इस प्रकार की धमकी, आक्रामक तेवर या सर्जिकल स्ट्राइक और ऑपरेशन से हम वास्तव में ये समझने लगे हैं कि आतंकवाद का ख़ात्मा हो जायेगा या इसका थ्रेट कम हो जायेगा? ■■

कान्ति के वे सब्सक्राइबर

जिन्होंने अभी तक अपनी ख़रीदारी की रक़म जमा नहीं की है,

बराय मेहरबानी

इस QR Code

के ज़रिये जल्द अदायगी करें।

Name: KANTI

Pay Directly to: kanti8920589292@indianbk

नोट :

अदायगी के बाद

स्क्रीनशॉट

इस नम्बर पर

(9818799223)

ज़रूर भेजें।

कर्म की दिशा और धर्म का मार्गदर्शन

चिंतन



रिज़वान अहमद

हम सभी जीवन में हर दिन निर्णय लेते हैं। हमारे विचार, इच्छाएं, अनुभव और समाज से मिली प्रेरणा हमारे निर्णयों को प्रभावित करती हैं, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण तत्व होता है धर्म। धर्म, जो न केवल धार्मिक आस्थाओं का पालन है, बल्कि जीवन के प्रत्येक पहलू में एक नैतिक दिशा, एक सही मार्ग को चिन्हित करने वाला सिद्धांत है। यह हमारी अंतरात्मा से आवाज़ देता है कि हम जो कर रहे हैं वह सही है या ग़लत। जब हमारी कर्म की दिशा धर्म के अनुरूप होती है, तो हम अपने जीवन को शांति, संतुष्टि और सच्चे उद्देश्य की ओर ले जाते हैं।

इस्लाम में कर्म और धर्म का संबंध बहुत गहरा और महत्वपूर्ण है। कर्म (Aamal) और धर्म (Deen) दोनों ही इस्लाम में अत्यधिक महत्व रखते हैं। कुरआन और हदीस में यह स्पष्ट किया गया है कि हर मुसलमान को अपने कर्मों को ईश्वर के आदेशों के अनुसार करना चाहिए। कर्मों का उद्देश्य न केवल व्यक्तिगत लाभ का होना चाहिए, बल्कि यह समाज में न्याय, समानता और शांति का निर्माण करना भी चाहिए।

कर्म और धर्म का परस्पर संबंध

कर्म और धर्म दोनों के बीच गहरा संबंध है। कर्म उन सभी कार्यों को कहा जाता है जो हम अपने जीवन में करते हैं, चाहे वे छोटे हों या बड़े। वे हमारे विचारों, कार्यों और शब्दों के रूप में प्रकट होते हैं। वहीं, धर्म वह नैतिक सिद्धांत है, जो जीवन के सही और ग़लत, अच्छे और बुरे के बीच भेद करने में हमारी मदद करता है।

धर्म का पालन करना हमें यह सिखाता है कि हमारे कर्म न केवल हमारे लिए, बल्कि समाज के लिए भी उपयुक्त होने चाहिए। जब हम अपने कर्मों में धर्म का पालन करते हैं, तो हम अपने व्यक्तिगत जीवन में संतुलन और शांति बनाए रखते हैं, और समाज में न्याय और समानता को बढ़ावा देते हैं। धर्म हमें यह समझाता है कि जीवन में संघर्ष और मुश्किलें आएंगी, लेकिन अगर हम हर स्थिति में अपने कर्मों को धर्म के अनुसार करेंगे, तो हम कभी भी आत्मग्लानि का शिकार नहीं होंगे।

धर्म का पालन क्यों ज़रूरी है?

धर्म का पालन न केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए, बल्कि पूरे समाज के लिए आवश्यक है। यदि समाज में हर व्यक्ति अपने कर्मों में धर्म का पालन करता है, तो वह समाज नैतिकता, दया, और समानता का एक आदर्श उदाहरण बन सकता है। धर्म का पालन व्यक्ति को आत्म-संतुष्टि देता है और उसे मानसिक शांति प्रदान करता है, जो कि भौतिक सुखों से कहीं अधिक मूल्यवान है।

धर्म केवल एक धार्मिक आस्था नहीं है, बल्कि यह जीवन के सभी पहलुओं को मार्गदर्शन देने वाला एक सिद्धांत है। यह हमें सही और ग़लत के बीच भेद करने की क्षमता देता है और हमें अपने कार्यों के परिणामों के प्रति सचेत करता है। जब हम धर्म का पालन करते हैं, तो

हम न केवल अपनी आत्मा को शांति देते हैं, बल्कि समाज में भी विश्वास और सम्मान का माहौल बनता है। यह भी सत्य है कि जब हम धर्म के अनुरूप कार्य करते हैं, तो न केवल हमें अपने कार्यों के परिणामों पर विश्वास होता है, बल्कि हमें अपने जीवन के उद्देश्य की सही पहचान भी मिलती है।

कर्म का अधर्म के साथ मिश्रण

जीवन में कई बार हम उन कार्यों के लिए प्रलोभित होते हैं जो तत्काल लाभ देते हैं, लेकिन वे धर्म के विपरीत होते हैं। यह अधर्म किसी रूप में भी प्रकट हो सकता है–जैसे झूठ बोलना, धोखा देना, दूसरों का शोषण करना या किसी की मजबूरी का फ़ायदा उठाना।

हालांकि ऐसे कर्म तात्कालिक रूप से हमें लाभ पहुंचाते हैं, लेकिन उनका लंबा असर न केवल हमारी आत्मिक स्थिति को ख़राब करता है, बल्कि यह समाज के लिए भी हानिकारक होता है। जब हम अपने कर्मों में अधर्म को बढ़ावा देते हैं, तो हम न केवल अपनी मानसिक शांति खोते हैं, बल्कि समाज में भी अव्यवस्था और हिंसा का माहौल उत्पन्न करते हैं।

यह महत्वपूर्ण है कि हम किसी भी परिस्थिति में यह न भूलें कि धर्म से परे किए गए कर्म कभी भी स्थायी सुख और सफलता नहीं ला सकते। अधर्म के रास्ते पर चलते हुए, हम पहले तो लाभ की अनुभूति करते हैं, लेकिन बाद में यह हमें मानसिक तनाव, अपराधबोध और आत्म-ग्लानि का शिकार बना सकता है।

सच्चा कर्म : धर्म के अनुरूप

कर्म का सच्चा रूप वही है जो धर्म के अनुरूप होता है। जब हम अपने कार्यों में सत्य, अहिंसा और करुणा का पालन करते हैं, तो हम अपने जीवन को सही दिशा में ले जाते हैं। सच्चे कर्म न केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए होते हैं, बल्कि यह समाज के लाभ के लिए भी होते हैं।

सच्चे कर्मों के फल हमेशा शुभ होते हैं, क्योंकि वे दूसरों को लाभ पहुंचाने वाले होते हैं। जब हम अपनी कोशिशों में सच्चाई का पालन करते हैं, तो हमें न केवल आत्मिक शांति मिलती है, बल्कि समाज में भी विश्वास और सम्मान का माहौल बनता है। यह भी सत्य है कि जब हम धर्म के अनुरूप कार्य करते हैं, तो न केवल हमें अपने कार्यों के परिणामों पर विश्वास होता है, बल्कि हमें अपने जीवन के उद्देश्य की सही पहचान भी मिलती है।

ईश्वर की ओर से दी गई मार्गदर्शिका (कुरआन) हमें यह बताती है कि कर्म तब तक सार्थक नहीं होते जब तक वे धर्म के अनुरुप न हों। इस्लाम में यह विश्वास है कि सच्चे कर्म वही हैं, जो ईश्वर की राह में किए जाते हैं और जो न केवल व्यक्ति के लिए, बल्कि समाज के लिए भी लाभकारी होते हैं। इस्लाम में कर्म का उद्देश्य केवल आत्मिक शांति प्राप्त करना नहीं है, बल्कि समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाना भी है।

सच्चे कर्मों का पालन करने से हमें यह समझ में आता है कि जो कर्म हम करते हैं, वह केवल हमारे जीवन को नहीं, बल्कि पूरे समाज को प्रभावित करता है। अगर हम अच्छे कर्मों की दिशा में कार्य करते हैं, तो समाज में सामूहिक परिवर्तन की संभावना होती है। यह ठीक वैसे ही है जैसे एक व्यक्ति का विश्वास और उसकी अच्छाई पूरे समाज के भीतर विश्वास और अच्छाई का संचार करती है।

जीवन में धर्म का पालन : कठिन निर्णयों का समय

जीवन में कई ऐसे क्षण आते हैं, जब हमें कठिन निर्णय लेने होते हैं। कभी हमें अपनी इच्छाओं और स्वार्थों के बीच चुनाव करना होता है, तो कभी हमें सही और ग़लत के बीच अंतर समझना होता है। ऐसे समय में धर्म हमें मार्गदर्शन प्रदान करता है।

जब हम अपनी इच्छाओं को धर्म के सिद्धांतों के अनुसार नियंत्रित करते हैं, तो हम सही निर्णय लेने में सक्षम होते हैं। उदाहरण के तौर पर, यदि किसी व्यक्ति को अपने करियर में सफलता पाने के लिए झूठ बोलने का अवसर मिलता है, तो धर्म उसे यह सिखाता है कि यह कर्म ग़लत है और इससे उसकी आत्मा को शांति नहीं मिलेगी।

धर्म हमें यह समझाता है कि चाहे हमें किसी भी दिशा में तत्काल सफलता मिले या न मिले, लेकिन अगर हम अपने कर्मों में सत्य और ईमानदारी का पालन करते हैं, तो अंततः हमें संतुष्टि और सफलता मिलेगी, जो कि किसी भी झूठे लाभ से कहीं अधिक मूल्यवान है।

इसके अतिरिक्त, जीवन में ऐसे कई अवसर आते हैं जब हमें किसी के लिए बलिदान देना पड़ता है। यह एक

जब हम धर्म के अनुरूप अपने कर्म करते हैं, तो हमें न केवल व्यक्तिगत शांति मिलती है, बल्कि हम समाज में सद्भाव और संतुलन का भी निर्माण करते हैं। यह भी सत्य है कि किसी भी प्रकार के अधर्म के कर्म (जो धर्म के विपरीत हों) न केवल हमें ईश्वर से दूर करते हैं, बल्कि वे समाज में भी नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इस्लाम हमें सीखता है कि हमें अपने कर्मों को ईश्वर के मार्गदर्शन के अनुसार सही दिशा में रखना चाहिए, ताकि हम सही उद्देश्य की ओर बढ़ सकें और समाज में शांति का वातावरण बना सकें।

कठिन निर्णय हो सकता है। ऐसे समय में धर्म हमें यह समझने में मदद करता है कि सही मार्ग पर चलने से हमेशा कोई न कोई सकारात्मक परिणाम मिलता है, भले ही वह तत्काल न दिखे। किसी दूसरे के लाभ के लिए व्यक्तिगत नुक़सान उठाना कभी व्यर्थ नहीं जाता। यही वह वक़्त है जब धर्म हमें अपनी आंतरिक आवाज़ से मार्गदर्शन करता है और हम सही निर्णय लेते हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि कर्म और धर्म का संबंध जीवन के सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है। जब हम अपने कर्मों में धर्म का पालन करते हैं, तो न केवल हम अपनी आत्मा को शांति देते हैं, बल्कि हम समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में भी मदद करते हैं। धर्म हमें यह सिखाता है कि हमारे कर्म हमेशा सच्चाई, अच्छाई और करुणा पर आधारित होने चाहिए।

जीवन में हर एक निर्णय, हर एक कार्य और हर एक क्रिया का आधार धर्म होना चाहिए, क्योंकि यही हमें वास्तविक सुख, शांति और सफलता की ओर मार्गदर्शन करता है।

हमें यह समझना चाहिए कि धर्म का पालन न केवल हमारे व्यक्तिगत जीवन के लिए आवश्यक है, बल्कि यह पूरे समाज के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण है। जब हम धर्म के मार्ग पर चलते हैं, तो हम न केवल अपनी आत्मिक शांति प्राप्त करते हैं, बल्कि हम समाज में शांति और समृद्धि का निर्माण भी करते हैं। यही कारण है कि हमें हमेशा यह याद रखना चाहिए कि हमारे कर्म धर्म के अनुरूप हों, ताकि हम अपने जीवन को सही दिशा में ले जा सकें और समाज में भी सकारात्मक बदलाव ला सकें।

इस्लामी दृष्टिकोण

इस्लाम में कर्म और धर्म का संबंध बहुत गहरा और महत्वपूर्ण है। कर्म (Aamal) और धर्म (Deen) दोनों ही इस्लाम में अत्यधिक महत्व रखते हैं। क़ुरआन और हदीस में यह स्पष्ट किया गया है कि हर मुसलमान को अपने कर्मों को ईश्वर के आदेशों के अनुसार करना चाहिए। कर्मों का उद्देश्य न केवल व्यक्तिगत लाभ का होना चाहिए, बल्कि यह समाज में न्याय, समानता और शांति का निर्माण करना भी चाहिए।

ईश्वर की ओर से दी गई मार्गदर्शिका (क़ुरआन) हमें यह बताती है कि कर्म तब तक सार्थक नहीं होते जब तक वे धर्म के अनुरूप न हों। इस्लाम में यह विश्वास है कि सच्चे कर्म वही हैं, जो ईश्वर की राह में किए जाते हैं और जो न केवल व्यक्ति के लिए, बल्कि समाज के लिए भी लाभकारी होते हैं। इस्लाम में कर्म का उद्देश्य केवल आत्मिक शांति प्राप्त करना नहीं है, बल्कि समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाना भी है।

इस्लामिक शिक्षाओं के अनुसार, धर्म का पालन करने से हमें ईश्वर का आशीर्वाद मिलता है, और हम सही मार्ग पर चलने के साथ-साथ समाज में भी अच्छाई फैला सकते हैं। जब हम धर्म के अनुरूप अपने कर्म करते हैं, तो हमें न केवल व्यक्तिगत शांति मिलती है, बल्कि हम समाज में सद्भाव और संतुलन का भी निर्माण करते हैं।

यह भी सत्य है कि किसी भी प्रकार के अधर्म के कर्म (जो धर्म के विपरीत हों) न केवल हमें ईश्वर से दूर करते हैं, बल्कि वे समाज में भी नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इस्लाम में यह सिखाया गया है कि हमें अपने कर्मों को ईश्वर के मार्गदर्शन के अनुसार सही दिशा में रखना चाहिए, ताकि हम सही उद्देश्य की ओर बढ़ सकें और समाज में शांति का वातावरण बना सकें। ■■

एक अपील , एक ऐलान और तआरुफ़

आपकी ख़ुसूसी तवज्जह का सबसे ज़्यादा मुस्तहिक़

38 साल की ख़िदमात

मुस्लिम लड़कियों का यतीमख़ाना, गया



कैफ़ीयते-क़ियाम : इदारा का तीन यतीम लड़कियों से 21 दिसम्बर 1986 को एक किराया के खपरैल मकान में क़ियाम अमल में आया था।

हिन्दुस्तान की रियासत बिहार, झारखंड, बंगाल, उड़ीसा में अपने तर्ज़ की पहली और वाहिद इक़ामती (Residential) तालीमगाह जो इस्लामी और असरी उलूम का संगम होने की वजह से मशहूर है। • इदारा बुनियाद के दिन से ही सही इस्लामी ख़ुतूत पर यतीम के साथ-साथ ग़रीब और ग़ैर-यतीम तालिबात की तालीमी व तर्बीयती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। • यहां की तालिबात को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में पहले और दूसरे साल में बाआसानी दाख़िला मिल जाता है। • शोबा-ए-हिफ़्ज़ की तालिबा को भी हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक तक पढ़ाया जाता है। • पांच ज़ुबानों में क़ुरआन और इस्लामियात और बिहार बोर्ड के निसाबे-तालीम के साथ मेयारी तालीम का नज़्म है। • **तालीमी साल** अप्रैल ता मार्च, • इदारा के अहाता (Campus) में ही पर्दे में रहकर नर्सरी से मैट्रिक तक की तालीम, होम साइंस, सिलाई-कटाई, मेहंदी व पेंटिंग और कम्प्यूटर की तालीम वग़ैरा दी जाती है। इसके लिए बच्चियों को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता। **तालीमी मराहिल** • इब्तिदाई •सानवी • आला • फ़ासलाती तालीम • शोबा हिफ़्ज़ **यतीम तालिबात की तादाद** 75 **नोट** यतीम तालिबात का सारा ख़र्च, तआम व क़ियाम वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त है। **बैरूनी तालिबात की तादाद** अपने ख़र्च पर दारुल अक़ामा (Boarding) में रहकर तालीम हासिल करने वाली और दूसरे गांव से पढ़कर जाने वाली लगभग 100 हैं । **किफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम बच्ची का सालाना ख़र्च पच्चीस हज़ार रुपये (Rs. 25,000) है। आप भी एक यतीम बच्ची की किफ़ालत की ज़िम्मेदारी लेकर सवाब में शरीक हों । **असातिज़ा, मुअल्लिमात और दीगर मुलाज़िमीन की तादाद** 33 तदरीसी और ग़ैर-तदरीसी स्टाफ़ की एक माह की तनख़्वाह एक लाख पच्चास हज़ार रुपये (Rs.1,50,000) से ज़्यादा है। **सालाना ख़र्च** तक़रीबन चालीस लाख रुपये (Rs. 40,00,000) । **ज़रिया आमदनी** मुस्लिम अवाम के चंदे **अपील** आज के माद्दापरस्ताना और जदीद दौर में लड़कियों के लिए जदीद और मुकम्मल इस्लामी तर्ज़े-तालीम के साथ रिहाइशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा बढ़कर ज़रूरत है। • आप इस महंगाई को देखते हुए और रमज़ान के मुबारक मौक़ा पर इदारे की नन्ही-मुन्नी मासूम यतीम बच्चियों को ऊंचा उठाने के लिए अपने • ज़कात • अतियात • सदक़ात से भरपूर माली मदद करें ताकि वे तालीम और हुनर के मैदान में आगे बढ़ सकें और किसी से पीछे न रहें। • बाक़ी तामीरी व तालीमी मन्सूबों को पूरा करने के लिए रक़म की फ़ौरी ज़रूरत है। • इदारा आपके फ़राख़दिलाना और मुख़लिसाना भरपूर माली तआवुन का मुंतज़िर है। **याद रखें** यह लड़कियों का इदारा है। यहां चंदा वसूल करने वालों की बहुत कमी है। यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन पर चंदा वसूल नहीं किया करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी फ़िल्म (Documentary Film) नज़रे-इनायत You Tube (Nazr-e-Enayeth) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGAE

बराए राबिता : चैक व ड्राफ़्ट और मनीआर्डर भेजने का पता

Founder & Hon. G. Secretary, THE GAYA MUSLIM GIRLS ORPHANAGE, At • : Kolowna, P.o : Cherki-824237, Distt : Gaya (Bihar) India

Email : thegayamuslimgirlsorphanage@gmail.Com, Mobile : 8969435151, Website : www.gmgo.in

: Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGE
(Bank A/C No. : 300402010007752 (ज़कात
(Bank A/C No. : 300402010009846 (डोनेशन
Bank IFSC Code No : UBIN0530042
Bank : UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए मेहरबानी स्कैन एंड पै (Scan & Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) नाम व पता सहित व्हाट्स एप कर दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

व्हाट्स एप नम्बर 7367909126 बानी व इज़ाज़ी जनरल सेक्रेट्री इक़बाल अहमद ख़ां 9934480190

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चैक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता करें।

जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां (सद्र) समनपूरा, पटना, **मोबाइल : 9934943229**

जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां, समनपूरा, पटना, **मोबाइल : 9631867066**

सौंदर्य बोध



जावेद इक़बाल

संघर्ष और धैर्य : जीवन का सार्थक दृष्टिकोण

जीवन के प्रत्येक मोड़ पर, हम किसी न किसी रूप में कठिनाइयों और संघर्षों का सामना करते हैं। चाहे वह व्यक्तिगत समस्याएं हों, परिवारिक संघर्ष हो, या समाज से जुड़ी कठिनाइयां, हम सभी को कभी न कभी ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है, जिनसे पार पाना आसान नहीं होता। कई बार यह कठिनाइयां हमें तोड़ने और हमारी उम्मीदों को ख़त्म करने के लिए होती हैं। ऐसे समय में हम अक्सर दूसरों से मदद की अपेक्षा करते हैं, लेकिन जीवन का सबसे बड़ा सत्य यही है कि बाहरी मदद हमेशा हमारी समस्याओं का हल नहीं हो सकती। अंततः, हमें अपनी आंतरिक ताक़त, आत्म-निर्भरता और धैर्य पर भरोसा करना होता है।

आत्म-निर्भरता का मतलब केवल ख़ुद के बल पर चलना या ख़ुद से काम करना नहीं है। यह हमारी मानसिकता और सोच को मज़बूत करने का तरीक़ा है। आत्म-निर्भरता का सच्चा अर्थ है ख़ुद के निर्णयों पर विश्वास रखना, और अपने जीवन को नियंत्रित करने के लिए अपने प्रयासों पर विश्वास करना। इसी तरह, संघर्ष और धैर्य भी इस प्रक्रिया का हिस्सा हैं, जो हमें जीवन के हर मोड़ पर आत्म-निर्भर बनने में मदद करते हैं। यदि हम आत्म-निर्भरता, संघर्ष और धैर्य के महत्व को गहराई से समझेंगे, तो देखेंगे कि ये गुण हमें कैसे मज़बूत बनाते हैं और जीवन की कठिनाइयों से उबरने में मदद करते हैं।

> **“धैर्य, संघर्ष का एक महत्वपूर्ण पहलू है। जब हम किसी कठिन परिस्थिति में होते हैं, तो हमें यह समझने की आवश्यकता होती है कि जल्दबाजी और हताशा हमें समाधान तक नहीं पहुंचने देगी।”**

आत्म-निर्भरता और आंतरिक शक्ति की पहचान

आत्म-निर्भरता का सबसे पहला पहलू यह है कि हम अपनी आंतरिक शक्ति को पहचानें। जब हम बाहरी सहायता पर पूरी तरह से निर्भर रहते हैं, तो हम अपनी शक्तियों को नकारते हैं। लेकिन जब हम आत्म-निर्भर होते हैं, तो हम अपनी कठिनाइयों का समाधान ख़ुद ढूंढ़ने की कोशिश करते हैं। आत्म-निर्भरता यह सिखाती है कि हम अपने जीवन के नियंत्रण को अपने हाथों में रखें और अपनी समस्याओं का सामना ख़ुद करें।

आत्म-निर्भरता को केवल शारीरिक प्रयासों से नहीं मापा जा सकता। यह मानसिक स्थिति, आत्म-विश्वास और इच्छाशक्ति का परिणाम होती है। जब हम किसी समस्या का

सामना करते हैं, तो हमारी सोच और दृष्टिकोण यह तय करते हैं कि हम किस तरह उस समस्या से निपटेंगे। अगर हम आत्म-निर्भर होते हैं, तो हम समझते हैं कि हमारे पास जो भी साधन हैं, उसी से हमें समस्या का समाधान निकालना होगा। यही आत्म-निर्भरता का अस्ली रूप है, जो हमें जीवन के हर संघर्ष में सक्षम बनाता है।

संघर्ष : जीवन का अभिन्न अंग

संघर्ष जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा है, और यह केवल हमारे भौतिक जीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्तर पर भी हम संघर्ष करते हैं। संघर्ष केवल एक कठिन स्थिति का नाम नहीं है, बल्कि यह हमारे आत्म-विश्वास, संकल्प और कड़ी मेहनत को परखने का तरीक़ा है। हर व्यक्ति के जीवन में कठिनाइयां आती हैं, लेकिन यही कठिनाइयां हमें यह सिखाती हैं कि हम अपनी क्षमता और सीमा को कैसे पहचान सकते हैं।

संघर्ष हमें यह समझने का अवसर देता है कि हमारे अंदर एक गहरी ताक़त छिपी हुई है, जो केवल कठिन परिस्थितियों में ही बाहर आ सकती है। जब हम संघर्ष करते हैं, तो हम अपने भीतर की उस शक्ति को महसूस करते हैं, जो हमें लगातार आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। संघर्ष हमें यह सिखाता है कि जीवन में कोई भी सफलता आसान नहीं होती। हमें अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिए कठिन रास्तों से गुज़रना होता है, और यह संघर्ष ही हमें हमारी अस्ली शक्ति और क्षमता से परिचित कराता है।

संघर्ष के दौरान हमें यह समझने की आवश्यकता होती है कि हर कठिनाई का एक उद्देश्य होता है। यह हमें मानसिक रूप से मज़बूत बनाता है और हमें अपने इरादों और लक्ष्यों के प्रति दृढ़ बनाता है। किसी भी संघर्ष का सामना करना केवल समस्याओं को हल करने का तरीक़ा नहीं है, बल्कि यह हमें जीवन के उच्चतम मूल्यों को समझने का भी अवसर देता है।

धैर्य : संघर्ष के दौरान स्थिरता बनाए रखना

धैर्य, संघर्ष का एक महत्वपूर्ण पहलू है। जब हम किसी कठिन परिस्थिति में होते हैं, तो हमें यह समझने की आवश्यकता होती है कि जल्दबाजी और हताशा हमें समाधान तक नहीं पहुंचने देगी। हमें धैर्य के साथ अपनी स्थिति का मूल्यांकन करना चाहिए और फिर सटीक क़दम उठाना चाहिए। धैर्य हमें शांत और स्थिर बनाए रखता है, और इससे हम मानसिक रूप से अधिक

❊ अल्लाह और रसूल की पुकार पर लब्बैक कहो जबकि वो तुम्हें बुलाते हैं उस चीज़ की तरफ जिसमें तुम्हारे लिए ज़िंदगी है। (क़ुरआन) ❊ उस शख़्स से बेहतर किसकी बात हो सकती है जो अल्लाह की तरफ बुलाये और नेक अमल करे और कहे कि मैं मुसलमानों में से हूँ। (क़ुरआन)



हिन्दुस्तान के मशहूर दीनी-इल्मी, फिक्री और म्यारी अख़बार व रसाइल (पत्रिकाओं) का मुताला(अध्ययन)कीजिए

इस सिलसिले में हमारी ख़िदमात हासिल कीजिए :

पेपर – पत्रिका	प्रति कापी	सालाना खरीददारी
✪ कान्ति साप्ताहिक अख़बार	7/-	350/-
✪ कान्ति मासिक पत्रिका	30/-	350/-
✪ दावत उर्दू अख़बार साप्ताहिक	15/-	750/-
✪ जिंदगी–ए–नौ उर्दू महाना	35/-	400/-

सालाना खरीददारी व ग्राहक बनने के लिए राब्ता करें :

अल फलाह AL FALAH True Success Both Worlds

हक़ीक़ी कामयाबी दोनों जहानों में

अख़्तर नवाब
✆ 9926408118

स्पष्टता से सोच सकते हैं।

धैर्य का अर्थ केवल कठिनाइयों को सहन करना नहीं है, बल्कि इसका मतलब यह है कि हम अपने आस्थाओं, विचारों और कार्यों में स्थिरता बनाए रखें। यह हमें यह सिखाता है कि हमारे जीवन की सफलता या असफलता केवल हमारे प्रयासों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि यह हमारी मानसिक स्थिति और धैर्य पर भी निर्भर करती है। जब हम धैर्य के साथ किसी समस्या का समाधान करते हैं, तो हम न केवल उस समस्या से बाहर निकलते हैं, बल्कि हम मानसिक रूप से भी एक मज़बूत व्यक्ति बन जाते हैं।

आत्म-निर्भरता, संघर्ष और धैर्य का समग्र प्रभाव

आत्म-निर्भरता, संघर्ष और धैर्य तीनों एक-दूसरे से गहरे तरीक़े से जुड़े हुए हैं। जब हम आत्म-निर्भर होते हैं, तो हम संघर्ष का सामना करने के लिए तैयार होते हैं, और जब हम संघर्ष करते हैं, तो हमें धैर्य की आवश्यकता होती है। ये तीनों गुण हमें जीवन में आगे बढ़ने और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्षम बनाते हैं।

इन तीनों गुणों का मिला-जुला होना न केवल हमारे जीवन को मज़बूत बनाता है, बल्कि हमें अपने आत्म-विश्वास और मानसिक स्थिरता को भी बनाए रखने में मदद करता है। जब हम अपनी आंतरिक शक्ति, संघर्ष की प्रक्रिया और धैर्य को अपने जीवन में अपनाते हैं, तो हम किसी भी स्थिति में सफलता हासिल करने के लिए तैयार हो जाते हैं।

आत्म-निर्भरता, संघर्ष और धैर्य : इस्लामिक दृष्टिकोण से

अब जब हम इन तीनों गुणों की चर्चा कर चुके हैं, तो इसे इस्लामिक दृष्टिकोण से भी समझना महत्वपूर्ण है। इस्लाम हमें आत्म-निर्भरता, संघर्ष और धैर्य के बारे में बहुत कुछ सिखाता है। क़ुरआन और हदीस में इन गुणों का अत्यधिक महत्व है, और इन्हें जीवन के मार्गदर्शन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इस्लाम में आत्म-निर्भरता को "तवक्कुल" के रूप में समझा जाता है, जिसका अर्थ है, अपनी पूरी मेहनत करने के बाद अपने प्रयासों का परिणाम ईश्वर पर छोड़ देना। यही तवक्कुल आत्म-निर्भरता का अस्ली रूप है, जो हमें यह सिखाता है कि हमें अपनी ज़िम्मेदारियां निभानी चाहिए, लेकिन हमें परिणामों पर चिंता नहीं करनी चाहिए।

हम सभी को कभी न कभी ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है, जिनसे पार पाना आसान नहीं होता। कई बार यह कठिनाइयां हमें तोड़ने और हमारी उम्मीदों को ख़त्म करने के लिए होती हैं। ऐसे समय में हम अक्सर दूसरों से मदद की अपेक्षा करते हैं, लेकिन जीवन का सबसे बड़ा सत्य यही है कि बाहरी मदद हमेशा हमारी समस्याओं का हल नहीं हो सकती। अंततः, हमें अपनी आंतरिक ताकत, आत्मनिर्भरता और धैर्य पर भरोसा करना होता है।

संघर्ष के बारे में इस्लाम में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को जीवन में कठिनाइयां आनी ही चाहिए, क्योंकि ये कठिनाइयां उसकी आस्थाओं और इरादों की परीक्षा होती हैं। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) का जीवन इस बात का सर्वोत्तम उदाहरण है कि कैसे हमें संघर्ष का सामना करते हुए भी अपनी आस्था और धैर्य बनाए रखना चाहिए। उन्होंने तमाम कठिनाइयों का सामना किया, लेकिन कभी भी अपने उद्देश्य से नहीं भटके।

धैर्य इस्लाम में एक अत्यंत महत्वपूर्ण गुण है, और इसे "सब्र" कहा जाता है। क़ुरआन में धैर्य रखने का बार-बार उल्लेख किया गया है, और इसे एक ऐसी क्षमता माना गया है जो हमें कठिन परिस्थितियों में शांत बनाए रखती है।

इस्लाम हमें यह सिखाता है कि हमें धैर्य से काम लेना चाहिए और किसी भी स्थिति में संयम बनाए रखना चाहिए।

संक्षेप में, आत्म-निर्भरता, संघर्ष और धैर्य जीवन के अनिवार्य गुण हैं, जो हमें किसी भी चुनौती का सामना करने के लिए तैयार करते हैं। ये गुण हमें जीवन में मानसिक और भावनात्मक रूप से मज़बूत बनाते हैं और हमें हमारी आंतरिक शक्ति का एहसास कराते हैं। इस्लाम इन गुणों को महत्व देता है और हमें यह सिखाता है कि जब हम ईश्वर पर भरोसा रखते हुए अपने प्रयासों को सही दिशा में लगाते हैं, तो हम किसी भी स्थिति में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। जीवन के संघर्षों से निपटने के लिए इन तीनों गुणों को अपनाना आवश्यक है, क्योंकि यही हमें जीवन की सच्ची सफलता तक पहुंचाने का मार्ग प्रदान करते हैं। ■■

क़ौम के अहल सर्वत और अह्ले-ख़ैर हज़रात से ख़ुसूसी अपील

यतीमख़ाना इस्लामिया, गया

आपके माली तआवुन का मुंतज़िर है

107 साल की ख़िदमात



तआरुफ़ : इदारा की बुनियाद अक्तूबर 1917 में एक उस्ताद और दो यतीम बच्चों से आठ आने (50 पैसे) माहवार किराया की कोठरी में Rs. 30 रुपये की छोटी-सी रक़म से पड़ी थी। **तालीमी साल :** अप्रैल ता मार्च **तालीमी मराहिल :** इब्तिदाई, • सानवी, • आला, • शोबा-ए-हिफ़्ज़, • इनायत (I.T.I) • फ़ासलाती तालीम : I.A., B.A, M.A और लाइब्रेरी साइंस (BLIS) • तादाद ज़ेरे-तालीम तलबा व तालिबात : तक़रीबन 450 • **तादाद कुल यतीम तलबा** 60 • बैरूनी तलबा, जो अपना ख़र्च देकर हॉस्टल में रहते हैं, उसके अलावा हैं। • तादाद तदरीसी व ग़ैर-तदरीसी स्टाफ़ : 20 **सालाना ख़र्च :** पैंतीस लाख (RS. 35,00,000) रुपये से ज़्यादा। **ज़रिया आमदनी :** मुस्लिम अवाम के चंदे। **ख़र्चे :** यतीम तलबा का सारा ख़र्च (तआम, क़ियाम, रिहाइश वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त) ये सारा ख़र्चे इदारा पूरा करता है। किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। **याद रखें :** (1) यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन पर चंदा वसूल नहीं किया करता है। (2) पांच ज़बानों में क़ुरआन व इस्लामियात के साथ क्लास 1 से मैट्रिक तक जो बिहार बोर्ड से मंज़ूरशुदा है मेयारी तालीम है। • हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक का नज़्म (3) 107 साल से यतीम और ग़ैर-यतीम तलबा की इस्लामी माहौल में दीनी व असरी तालीम के साथ तालीमी व तरबियती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। (4) इदारा ही के Campus में दो हरे-भरे पार्क के साथ शानदार मस्जिद, तालीमगाह, इक़ामतगाह, मतबख़ और दूसरे शोबे वग़ैरा हैं • इसलिए तलबा को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता है। **कफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम तालिब-इल्म का सालाना ख़र्च RS. 25,000 है। आप भी इस कारे-सवाब में शरीक हों। • यहां के तलबा को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में आलिमियत के पहले व दूसरे साल में आसानी से दाख़िला मिल जाता है। (5) यतीमख़ाना से मैट्रिक पास करने वाले यतीम तलबा का दाख़िला यतीमख़ाना के इनायत (I.T.I.) में बिल्कुल मुफ़्त है। उनसे किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। पहले की तरह रहने-सहने और खाने-पीने की सारी सहूलियात दी जाती है। **अपील :** इस माद्दा परस्ताना और जदीद दौर में दीनी व असरी उलूम के रिहायशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा ज़रूरत है। • आसमान छूती महंगाई में इदारा की भरपूर माली मदद करें। तआवुन की मुख़्तलिफ़ शक्लें हैं जैसे • ज़कात, • अतियात, • सदक़ात, वग़ैरा और इदारा के बाक़ी तालीमी व तामीरी मन्सूबों के लिए भी रुपये की बहुत ज़रूरत है। इदारा आपसे नन्हे-मुन्ने मासूम यतीम बच्चों को तालीम के साथ-साथ बाहुनर बनाने के लिए और उन्हें ऊंचा उठाने के लिए फ़राख़दिलाना माली तआवुन की अपील करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी (Documentary Film) फ़िल्म नज़रे-इनायत You Tube (Nazr-e-Enayeth) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM ORPHANAGAE

बराए राबिता : चैक व ड्राफ़्ट और मनीआर्डर भेजने का पता

Hon. Secretary, THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE •
Cherki-824237, Distt : Gaya (Bihar) India

Mobile : 9801213022, Whatsapp No. 7258063440

: Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE
(Bank A/C No.: 300402010010581 (ZAKATH
(Bank A/C No.: 300402010002982 (DONATIONS
Bank IFSC Code No: UBIN0530042
Bank: UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए मेहरबानी स्कैन ऐंड पे पर (Scan to Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) और नाम व पता ऊपर के व्हाट्सऐप नंबर पर भेज दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ान
कारगुज़ार सदर : 9631867066

डॉक्टर जेड.ऐच. ख़ान
एजाज़ी सेक्रेट्री

E-mail : gmocde@yahoo.com.in
Website: www.gmogaya.in

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चेक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता क़ायम करें। जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां समनपुरा, पटना। 9934943229, जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां समनपुरा, पटना। 9631867066



भारत-पाक तनाव :

युद्ध के कोलाहल में गुम न हो जाए न्याय का प्रश्न

जम्मू-कश्मीर के पहलगाम में 26 निर्दोष सैलानियों की हत्या केवल एक आतंकी घटना नहीं, बल्कि इंसानियत, मज़हब और नैतिकता के ख़िलाफ़ खुली बग़ावत थी। भारत ने इसके जवाब में ऑपरेशन सिंदूर आरंभ किया। स्थिति ऐसी बन गई कि भारत और पाकिस्तान—दो परमाणु संपन्न राष्ट्र एक बार फिर युद्ध के उस मुहाने पर खड़े हो गए, जहां किसी एक की भी लापरवाही इतिहास की धारा को अनपेक्षित मोड़ दे सकती थी। सीमाओं पर गूंजती गोलियों की आवाज़ें न केवल दुश्मन के लिए बल्कि अपने ही घरों में डर, अनिश्चितता और बेचैनी का कारण बन गई।

लेकिन इस बीच 10 मई 2025 को घोषित हुए सीज़फायर ने दोनों देशों को एक बार फिर युद्ध के कगार से पीछे खींच लिया। इस सीज़फायर के बावजूद, सीमावर्ती क्षेत्रों में तनाव बना हुआ है। दोनों ओर की सेनाएं अलर्ट पर हैं। कूटनीतिक चैनल खुले ज़रूर हैं, पर संवाद का स्वर धीमा है। राजनेता बयानबाज़ी कर रहे हैं, सोशल मीडिया पर उन्माद और अफ़वाहों का सैलाब बह रहा है, और आम नागरिक एक बार



फिर डर, भ्रम और पीड़ा के साए में जीने को मजबूर हैं।

इस क्षण में सबसे ज़रूरी सवाल यह है—क्या युद्ध और हिंसा से किसी समस्या का समाधान निकलता है? इतिहास इसका उत्तर 'नहीं' में देता है। कारगिल से पुलवामा तक, और बलूचिस्तान से स्वात तक, हमने युद्धों और महायुद्धों के कई रंग देखे हैं। पूरी दुनिया ने देखा है कि युद्ध केवल सीमाएं नहीं बदलता—वह इंसानी चेतना को भी लहूलुहान करता है।

युद्ध की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि वह जीतकर भी बहुत कुछ हार जाता है। कोई भी युद्ध केवल रणनीतिक भूगोल नहीं बदलता, वह समाज की आत्मा को भीतर तक झकझोर देता है। एक पक्ष भले रणभूमि में विजयी हो जाए, लेकिन उस जीत की क़ीमत इतनी अधिक होती है कि वह एक शोकगीत बन जाती है। युद्ध में पराजित केवल विरोधी सेना नहीं होती, बल्कि मानवता, करुणा और सभ्यता की विरासत बार-बार घायल होती है।

भारत और पाकिस्तान, दोनों

देश लंबे समय से आंतरिक संघर्ष, आर्थिक चुनौतियों और सामाजिक विषमताओं से जूझ रहे हैं। दोनों देशों की एक बड़ी आबादी आज भी पीने के पानी, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और मूलभूत स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए संघर्ष कर रही है। ऐसे में युद्ध की कल्पना केवल राजनीतिक हठधर्मिता नहीं, बल्कि मानवता के साथ गद्दारी है।

उल्लेखनीय है कि भारत में आतंकवादी हमलों के पीछे जो ताक़तें सक्रिय हैं, वे अक्सर धर्म का मुखौटा पहनती हैं। धार्मिक प्रतीकों और शब्दों का दुरुपयोग कर वे अपनी हिंसा को "धर्म-युद्ध" का नाम देती हैं, लेकिन यह स्पष्ट समझना चाहिए कि आतंकवाद का संबंध किसी धर्म या मज़हब से नहीं है। जो लोग धर्म के नाम पर गोली चलाते हैं, वे दरअस्ल हर धर्म के दुश्मन हैं। ऐसे समय में राजनीति की भूमिका निर्णायक होती है। दुर्भाग्य से, कई बार नेताओं के भाषण, ट्वीट और बयानों से शांति नहीं, बल्कि उकसावे और ध्रुवीकरण की गंध आती है। यह केवल चुनावी रणनीति नहीं, बल्कि सामाजिक ताने-बाने को तोड़ने वाली एक सुविचारित चाल है।

मीडिया की भूमिका इस समय और भी अधिक संवेदनशील बन जाती है। जब मीडिया शांति का वाहक बनने के बजाय केवल टीआरपी का पीछा करता है, तब वह आग में घी डालने का काम करता है। कश्मीर से आई ख़बरें जब केवल "ब्रेकिंग न्यूज़" बन जाती हैं, तब पीड़ितों का दुःख, जवानों का बलिदान और सीमांत जनता का डर सब गौण हो जाता है।

पत्रकारिता को इस समय सबसे पहले इंसानियत के साथ खड़ा होना चाहिए। धर्मनिरपेक्षता, संवेदनशीलता और सच्चाई को सामने लाना उसका धर्म होना चाहिए—ना कि भावनाओं का बाज़ारीकरण।

वास्तविकता यह है कि दोनों देशों के सीमावर्ती इलाक़ों में सबसे अधिक पीड़ा आम नागरिकों को होती है। भारत की सीमाओं पर बसे जम्मू-कश्मीर, पंजाब, राजस्थान और गुजरात के गांवों में रातें गोलियों की आवाज़ में बीतती हैं। पाकिस्तान के पंजाब और सिंध के गांव भी इसी त्रासदी से जूझते हैं। विस्थापन, स्कूलों का बंद होना, किसानों की फ़सलें तबाह होना, बच्चों की पढ़ाई का टूटना—ये युद्ध के वो चेहरे हैं जिन्हें मुख्यधारा मीडिया शायद ही दिखाता है।

युद्ध की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि वह जीतकर भी बहुत कुछ हार जाता है। कोई भी युद्ध केवल रणनीतिक भूगोल नहीं बदलता, वह समाज की आत्मा को भीतर तक झकझोर देता है। एक पक्ष भले रणभूमि में विजयी हो जाए, लेकिन उस जीत की क़ीमत इतनी अधिक होती है कि वह एक शोकगीत बन जाती है। युद्ध में पराजित केवल विरोधी सेना नहीं होती, बल्कि मानवता, करुणा और सभ्यता की विरासत बार-बार घायल होती है।

दोनों देशों को यह समझना होगा कि युद्ध किसी समस्या का समाधान नहीं है। 1947 से अब तक तीन बड़े युद्ध, कई सीमावर्ती झड़पें और दर्जनों शांति वार्ताएं देख चुके भारत और पाकिस्तान के पास आज भी कश्मीर समस्या का कोई स्थायी हल नहीं है। इसका समाधान होगा—राजनीतिक साहस, पारस्परिक सम्मान और निरंतर संवाद के ज़रिए।

इसके लिए ज़रूरी है कि पाकिस्तान को अपनी धरती से किसी भी प्रकार के आतंकवाद को पूर्ण रूप से समाप्त करना होगा। भारत को भी सामरिक बल के साथ कूटनीतिक मार्गों को खुला रखना होगा। दोनों देशों को एक बार फिर शिमला समझौता, लाहौर घोषणापत्र और नियंत्रण रेखा की अवधारणा को पुनर्जीवित करना होगा—न कि उन्हें इतिहास की धूल में दफ़न करना।

भारत और पाकिस्तान केवल संघर्षों की नहीं, बल्कि साझी विरासत की भी पहचान हैं। अमृता प्रीतम की कविताएं, फैज़ की ग़ज़लें, मेहदी हसन की गायकी, गुलज़ार की कहानियां—क्या ये सब हमारी सांझी थाती नहीं हैं?

सवाल यह है कि हम इस विरासत को बचाना चाहते हैं, या नफ़रत के सौदागरों के हाथों इसे जलने देना चाहते हैं?

भारत और पाकिस्तान के राजनीतिक, धार्मिक और नागरिक समाज को अब एक निर्णायक मोड़ पर खड़े होकर यह तय करना होगा कि वे अपनी अगली पीढ़ी को कैसा भविष्य देना चाहते हैं—नफ़रत की लाशों से लदा हुआ, या दोस्ती और विकास की उम्मीद से भरा हुआ?

इस कठिन समय में एक ही राह बचती है—संवाद की। क्योंकि जब बंदूकें बोलती हैं, तब इंसानियत ख़ामोश हो जाती है। युद्ध केवल सैनिक को नहीं मारता, वह खेतों में उगते अनाज को कुचलता है, स्कूल की घंटियों को सन्नाटे में बदल देता है, और मां की आंखों में पलते भविष्य के सपनों को राख कर देता है। वह किसी राष्ट्र की रक्षा नहीं करता, बल्कि उसकी आत्मा

को घायल कर देता है।

भले ही एक पक्ष अपने को 'विजयी' घोषित कर ले, लेकिन जिन खेतों में बारूद बोया गया हो, वहां अगली फ़सल पीढ़ियों बाद भी नहीं लहलहाती। युद्ध के बाद जो 'शांति' आती है, वह एक अस्थायी चुप्पी होती है, स्थायी समाधान नहीं।

इसलिए ज़रूरी है कि हम संवाद को केवल एक औपचारिक प्रक्रिया न समझें, बल्कि उसे समस्या-समाधान की मूल शर्त के रूप में स्वीकार करें। शांति कोई आदर्शवादी कल्पना नहीं, बल्कि एक रणनीति है, जो आने वाली नस्लों के लिए ज़िंदगी को बेहतर बना सकती



है। संवाद वह पहला क़दम है, जो विरोध को समझ में, भय को भरोसे में और नफ़रत को नीतिगत भूल में बदलता है। जब दो देशों के बीच भरोसे का पुल टूट जाता है, तब उसे जोड़ने का सबसे पहला और सबसे असरदार ज़रिया संवाद ही होता है।

यह संवाद केवल उच्चस्तरीय वार्ताओं तक सीमित न रहे, बल्कि इसे सीमाओं पर खड़े सैनिकों से लेकर विश्वविद्यालयों के छात्रों, किसानों, लेखकों, कलाकारों और आम नागरिकों तक फैलना चाहिए—एक सतत और बहुस्तरीय संवाद के रूप में।

संवाद न केवल मतभेदों को पाटने का माध्यम है, बल्कि वह उस साझा सांस्कृतिक, भाषायी और ऐतिहासिक विरासत को भी जीवित रखता है, जो भारत और पाकिस्तान के बीच अब भी एक अदृश्य पुल की तरह मौजूद है। युद्ध उस पुल को गिरा देता है, लेकिन संवाद उसे मज़बूत करता है।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि शांति एकतरफ़ा इच्छा नहीं होती। यह दोतरफ़ा समझदारी, संयम और संवेदना की मांग करती है। जो समाज संवाद की ताक़त को नहीं पहचानता, वह बारूद के सहारे राष्ट्र की सुरक्षा नहीं कर सकता। क्योंकि बंदूक़ें सीमाएं भले बचा लें, दिलों की दूरी नहीं पाट सकतीं।

इसलिए आज, इस नाज़ुक घड़ी में, जब सीमाओं पर तनाव है और मीडिया की सुर्खियां बारूद से लिपटी हैं, तब सबसे अधिक आवश्यकता है इस बात की है कि हर देशवासी, हर ज़िम्मेदार नेता, हर सजग पत्रकार और हर धार्मिक प्रतिनिधि युद्ध के विचार को त्यागे और न्याय एवं संवाद के विचार को थामे—संवाद एक ऐसा विकल्प जिससे विनाश से बचने के बहुत से विकल्प खुलते हैं।

किसी राष्ट्र की असली ताक़त उसकी सैन्य शक्ति नहीं, बल्कि वह नैतिक ऊंचाई होती है जो युद्ध से नहीं, न्याय से हासिल होती है। अगर हम वाक़ई अपने बच्चों को एक सुरक्षित और सम्मानजनक भविष्य देना चाहते हैं, तो हमें युद्ध की रणनीतियों से ज़्यादा संवाद की ईमानदारी और न्याय की सार्वभौमिकता में भरोसा करना होगा। न्याय, जो न बदले की भावना से उपजे, न राजनीतिक लाभ से प्रेरित हो बल्कि जो हर पीड़ित के आंसू पोंछ सके, हर नागरिक को सुरक्षा का यक़ीन दे सके, और हर सरहद पर अमन का सूरज उगा सके।

इसलिए यह संघर्षविराम दोनों देशों को एक महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है, जिसमें दोनों देशों को संवाद के माध्यम से अपने मतभेदों को सुलझाने का प्रयास करना चाहिए। युद्ध से केवल विनाश होता है, जबकि संवाद और न्याय से स्थायी शांति स्थापित की जा सकती है। इसलिए, हमें इस अवसर का उपयोग करके एक स्थायी और न्यायसंगत समाधान की दिशा में क़दम बढ़ाना चाहिए। ■■



आम आदमी को कितनी चुकानी पड़ती है युद्धों की क़ीमत ?

सन 1971 में भारत ने कई मोर्चों पर एक साथ पाकिस्तान को धूल चटाई थी। बांग्लादेश आज़ाद हुआ था और पाकिस्तान के दो टुकड़े हो गए थे। आज़ादी के बाद भारत के सैन्य इतिहास की यह सबसे बड़ी उपलब्धि है। मगर शौर्य की यह यशगाथा जिनको याद है, उन्हें यह भी वाद होगा कि उसी दौरान भारत सरकार ने एक शरणार्थी शुल्क लगाने का एलान किया था, जिसे 'बांग्लादेश सरचार्ज' या 'बांग्लादेश टैक्स' के नाम से जाना जाता है। इसे बांग्लादेशी शरणार्थियों के देश में आने के कारण लगाया गया था और क़रीब-क़रीब हर चीज़ पर लगा था। अनुमान था कि कुछ समय बाद यह ख़त्म हो जाएगा, मगर ऐसा हुआ नहीं।

अभिमत



आलोक जोशी

युद्ध का असर आर्थिक मोर्चे पर लंबे समय तक महसूस किया जाता है, न सिर्फ़ उन देशों में, जिनके बीच युद्ध होता है, बल्कि बहुत दूर-दूर तक भी।

उसके क़रीब चार दशक बाद 2014 में मुंबई हाईकोर्ट में एक जनहित याचिका आई, जिसमें पूछा गया कि बांग्लादेश की लड़ाई के इतने साल बाद भी महाराष्ट्र की सरकारी बसों में हर टिकट पर 15 पैसे का बांग्लादेश चार्ज क्यों वसूला जा रहा है? पता चला कि राज्य की परिवहन एजेंसियां तब तक इस मद में 440 करोड़ रुपये जमा कर चुकी थीं। इस रक़म का क्या करना है, उनको पता नहीं था और वे इसका इस्तेमाल अपने कर्मचारियों का वेतन बांटने या दूसरे ख़र्चों पर कर रही थीं। याचिका का क्या हुआ, इसकी ख़बर नहीं मिल पाई है। मगर इससे समझा जा सकता है कि अगर देश के सारे हिस्सों में इस तरह जमा हुई रक़म का ही हिसाब जोड़ा जाए, तो उस युद्ध में भारत की जनता

के कई हज़ार करोड़ रुपये की यह सीधी आहुति थी।

जेल की रोटी का ख़र्च भी युद्ध के खाते में

उसी लड़ाई में दुनिया के इतिहास का सबसे बड़ा आत्म-समर्पण भी हुआ था। ढाका में पाकिस्तानी जनरल ए.ए. के. नियाजी के साथ क़रीब 93,000 सैनिकों ने लेफ्टिनेंट जनरल जगजीत सिंह अरोड़ा के सामने हथियार डाले थे। ये फ़ौजी तब तक भारत की क़ैद में रहे और जेल की रोटी खाते रहे, जब तक 1972 में शिमला समझौते के बाद उन्हें वापस नहीं भेजा गया। इनका ख़र्च भी युद्ध के खाते में ही जुड़ता है।

गोला-बारूद, विमान, युद्धपोत, मिसाइल, अब ड्रोन और ऐसी ही तमाम बुद्ध सामग्रियों के अलावा सैनिकों व सेना के इंतिज़ाम पर होने वाला ख़र्च हर लड़ाई में बढ़ता ही जा रहा है। इसका हिसाब देश के बजट में देखा जा सकता है। युद्ध में तबाह होने वाली इमारतों व संपत्ति का भी हिसाब जोड़ा जा सकता है और युद्ध के दौरान होने वाला ख़र्च भी। दोनों पक्षों में जिन-जिन लोगों की जान जाती है, उनका और उनके परिवारों का जो नुक़सान होता है, उसका हिसाब किसी बजट में नहीं दिखेगा, सिर्फ़ महसूस किया जा सकता है। मगर युद्ध का असर आर्थिक मोर्चे पर लंबे समय तक महसूस किया जाता है, न सिर्फ़ उन देशों में, जिनके बीच युद्ध होता है, बल्कि बहुत दूर-दूर तक भी। जैसे अभी यूक्रेन-रूस की लड़ाई और इज़रायल-हमास संघर्ष का असर पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था पर साफ़ दिख रहा है।

यहां देखने वाली बात यह है कि जिस साल युद्ध होता है, उस वर्ष उसका असर शायद महसूस नहीं होता और उसके बाद के समय में जब देश पुनर्निर्माण में लगा होता है,



तब जीडीपी ग्रोथ की रफ़्तार भी बढ़ने लगती है। मगर उसी वक्त महंगाई का प्रकोप भी चरम पर होता है और तब आम आदमी को चुकानी पड़ती है युद्ध की क़ीमत।

पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था पर असर

भारत और पाकिस्तान के बीच जो दो बड़े युद्ध हुए हैं, उन दोनों का भी असर हुआ। 1965 की लड़ाई के पहले 1964 में भारत में महंगाई दर 13.36 प्रतिशत और पाकिस्तान में 4.18 प्रतिशत थी। युद्ध वाले साल में यह आंकड़ा भारत में गिरकर 9.47 प्रतिशत हुआ, जबकि पाकिस्तान में बढ़कर 5.57 प्रतिशत पहुंचा। युद्ध के बाद महंगाई बढ़ने लगी। 1966 में भारत में 10.88 प्रतिशत और पाकिस्तान में 7.23 प्रतिशत महंगाई दर हुई।

1967 में यह आंकड़ा भारत में 13.06 प्रतिशत और पाकिस्तान में 6.81 प्रतिशत पर पहुंचा। इसके बाद के साल में महंगाई तेज़ी से गिरी, जिसकी वजह शायद भारत में हरित क्रांति व आर्थिक नीतियों का असर था, जबकि पाकिस्तान में विदेशों से आने वाली मोटी रक़म।

दूसरी तरफ़, भारत की जीडीपी



ग्रोथ 1964 में 7.45 प्रतिशत से गिरकर 1965 में शून्य से भी 2.64 प्रतिशत नीचे चली गई और 1966 में यह कुछ कम ही हुई। यह उबरती है 1967 में। इधर जो पाकिस्तान 1965 में 10 प्रतिशत से ऊपर की रफ़्तार से बढ़ रहा था, वह 1966 और 1967 में गिरकर क्रमशः 5.79 प्रतिशत और 5.4 प्रतिशत पर रह जाता है, यानी लगभग आधा।

युद्ध के बाद महंगाई की मार

मगर इसके बाद तस्वीर का रुख़ फिर से पलट गया। 1970 में भारत की महंगाई दर 5.09 प्रतिशत और पाकिस्तान की 5.35 प्रतिशत थी। युद्ध वाले साल 1971 में यह आंकड़ा भारत में 3.08 प्रतिशत और पाकिस्तान में 4.73 प्रतिशत तक पहुंचा। 1972 में भी थोड़ी सी बढ़त दिखी, लेकिन उसके बाद तो जैसे क़हर टूट पड़ा। 1973, 74 और 75 में पाकिस्तान की महंगाई दर थी क्रमशः 23.07 प्रतिशत, 26.66 प्रतिशत और 20.90 प्रतिशत। यही नहीं, इन्हीं वर्षों में पाकिस्तान की जीडीपी की रफ़्तार भी 1970 के 11.35 प्रतिशत से गिरकर अगले दो साल में एक प्रतिशत के भी नीचे पहुंच चुकी थी। उसके बाद वहां से उबरने की तमाम कोशिशों के बाद भी वह आर्थिक मोर्चे पर कुछ हासिल करने में नाकाम ही रहा है।

विजय का उल्लास ख़त्म होते-होते युद्ध का असर

इधर भारत पर भी विजय का उल्लास ख़त्म होते-होते युद्ध का असर दिखने लगा था। जीडीपी ग्रोथ की रफ़्तार 1970 के 5.17 प्रतिशत से 1971 में 1.64 प्रतिशत और 1972 में तो -0.5 प्रतिशत पर पहुंच गई। उसके बाद भी इसे संभलने में दो साल लगे और 1975 में जाकर यह 9.15 प्रतिशत पर पहुंची। उधर महंगाई का हाल देखें, तो 1969 में दाम बढ़ने के बजाय घट रहे थे और 1970 में 5.09 प्रतिशत पर पहुंचकर 1971 में महंगाई दर 3.08 प्रतिशत पर आई। इसके बाद यह बढ़ी, तो 1974 तक 28.60 प्रतिशत की ऐतिहासिक ऊंचाई पर पहुंची।

गोला-बारूद, विमान, युद्धपोत, मिसाइल, अब ड्रोन और ऐसी ही तमाम बुद्ध सामग्रियों के अलावा सैनिकों व सेना के इंतिज़ाम पर होने वाला ख़र्च हर लड़ाई में बढ़ता ही जा रहा है। इसका हिसाब देश के बजट में देखा जा सकता है। युद्ध में तबाह होने वाली इमारतों व संपत्ति का भी हिसाब जोड़ा जा सकता है और युद्ध के दौरान होने वाला ख़र्च भी। दोनों पक्षों में जिन जिन लोगों की जान जाती है, उनका और उनके परिवारों का जो नुक़सान होता है, उसका हिसाब किसी बजट में नहीं दिखेगा, सिर्फ़ महसूस किया जा सकता है।

आम आदमी को चुकानी पड़ती है युद्ध की क़ीमत

यहां देखने वाली बात यह है कि जिस साल युद्ध होता है, उस वर्ष उसका असर शायद महसूस नहीं होता और उसके बाद के समय में जब देश पुनर्निर्माण में लगा होता है, तब जीडीपी ग्रोथ की रफ़्तार भी बढ़ने लगती है। मगर उसी वक़्त महंगाई का प्रकोप भी चरम पर होता है और तब आम आदमी को चुकानी पड़ती है युद्ध की क़ीमत।

मगर यह भी याद रखना चाहिए कि शांति-काल में आतंकवाद के रूप में भी क़ीमत चुकानी पड़ती है। उससे भी आर्थिक विकास में रुकावट आती है। इसकी क़ीमत चुकाते रहना है या एक बार जोखिम लेना है, यह फ़ैसला आसान नहीं हो सकता। मगर दुनिया के इतिहास में वियतनाम, जापान और इज़रायल जैसे उदाहरण भी मौजूद हैं, जो दिखाते हैं कि युद्ध की विभीषिका के बाद भी कैसे राष्ट्र न सिर्फ़ अपने पैरों पर खड़े होते हैं, बल्कि दुनिया को अपनी आर्थिक ताक़त का एहसास भी करवा देते हैं। (साभार, हिंदुस्तान)

■■



हरेक जान का हो सम्मान

समाधान



लुबना सबूब

"जिसने किसी इंसान को क़त्ल के बदले या ज़मीन में बिगाड़ फैलाने के सिवा किसी और वजह से क़त्ल कर डाला, उसने मानो समूची इंसानियत को क़त्ल कर दिया।" (क़ुरआन, 5:32)

क़ुरआन की यह आयत केवल एक धार्मिक आदेश नहीं, बल्कि सभ्यता के मूल में रची-बसी वह नैतिक चेतावनी है, जो हर युग, हर मज़हब और हर इंसान के लिए है। यह वाक्य न्याय और करुणा की उस सार्वभौमिक आवाज़ की तरह है, जो इंसानी जान की पवित्रता को सबसे ऊंचा दर्जा देती है। यह आयत इंसानियत के हक़ में एक बुलंद दस्तावेज़ है—जो बताती है कि एक निर्दोष की हत्या पूरी मानवता की हत्या के बराबर है।

हाल ही में जम्मू-कश्मीर के पहलगाम में हुए आतंकी हमले, जिसमें 26 निर्दोष सैलानियों की जानें गईं, इस्लामी शिक्षाओं की खुली अवहेलना हैं। न केवल यह कृत्य मानवता के ख़िलाफ़ अपराध है, बल्कि उन लोगों की ओर से भी दोगलापन है जो इस्लाम के नाम पर हिंसा को जायज़ ठहराने की कोशिश करते हैं। हत्या चाहे किसी धर्म, नस्ल, भाषा या राजनीतिक विचार के व्यक्ति की हो, हर स्थिति में यह एक अमानवीय और शरई तौर पर निंदनीय कृत्य है।

इस्लामी दृष्टिकोण यह है कि किसी की जान लेना केवल क़ानूनी और न्यायिक प्रक्रिया के ज़रिए ही संभव है, और उसमें भी हत्या की सज़ा का निर्धारण केवल राज्य करेगा। क़ुरआन साफ़ कहता है, "ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम्हारे लिए क़त्ल के मुक़द्दमों में क़िसास (बदले) का आदेश लिख दिया गया है...।" (क़ुरआन, 2:178-179)

पहलगाम की घटना केवल आतंकी कार्रवाई नहीं, बल्कि पूरी इंसानियत का अपमान है। यह हमला उन मूल्यों पर भी आघात करता है जो सभी धर्म सिखाते हैं—"तुम हत्या नहीं करोगे" (बाइबल, तौरात)। इस हमले में शामिल आतंकवादी न तो किसी इस्लामी सिद्धांत का पालन कर रहे थे और न ही किसी इंसानी तहज़ीब का। इस्लाम में अगर कोई ज़बरदस्ती किसी से कलमा पढ़वाता है, तो यह भी कलमे

की तौहीन है। क्योंकि कलमा सच्चे दिल से, ईमान के साथ पढ़ा जाना चाहिए, न कि डर, ज़ुल्म या दबाव में।

इस्लाम कहता है, "दीन में ज़बरदस्ती नहीं है।" (क़ुरआन, 2:256) यानी किसी को भी बलात् धर्म स्वीकार करने पर मजबूर नहीं किया जा सकता। जो लोग बंदूक़ की नोंक पर "कलमा" पढ़वाते हैं, वे इस्लामी नहीं, बल्कि इस्लाम की बदनामी करने वाले हैं।

इस घटना की निंदा करते हुए यह समझना ज़रूरी है कि ऐसे हमलों के पीछे सिर्फ़ आतंकवादी नहीं होते, बल्कि एक लंबी नफ़रत की राजनीति और धार्मिक उन्माद भी शामिल होता है।

नफ़रत की सियासत और हिंसा की जड़ें

आज दुनिया भर में नफ़रत की राजनीति बढ़ रही है। सियासी लोग धर्म, जाति और क्षेत्र के आधार पर समाज को बांटते हैं, और फिर उसी बटे समाज में हिंसा पनपती है। यह पहला कारण है, जिसने पहलगाम जैसे हमलों को जन्म दिया है।

दूसरा दोष उन धार्मिक नेताओं का है जो अपने मंच से शांति, धैर्य और आपसी सम्मान की बातें करने के बजाय नफ़रत फैलाते हैं। जब धार्मिक तबक़ा ही नफ़रत का संवाहक बन जाए, तो समाज में इन्सानियत कैसे बचेगी?

तीसरी समस्या हमारी फ़िल्म इंडस्ट्री की है। जहां हीरो हत्या करता है और दर्शक तालियां बजाते हैं। यह हिंसा का महिमामंडन है, जिससे युवाओं के ज़ेहन में यह बैठता है कि हत्या कोई बड़ी बात नहीं, बल्कि प्रतिशोध का साधन है। रिसर्च पेपर यह बताते हैं कि फ़िल्मों और वीडियो गेम्स में हिंसा के बढ़ते चित्रण ने नई पीढ़ी को संवेदनहीन बना दिया है।

चौथी समस्या वीडियो गेम्स की है, जहां बच्चों को 'स्कोर' बढ़ाने के लिए ज़्यादा से ज़्यादा 'लाशें' गिरानी होती हैं। यह मानसिक रूप से उन्हें मारने के लिए तैयार करता है।

पांचवीं और सबसे गंभीर बात हमारे घर के माहौल की है। जब हम अपने बच्चों को दूसरों की जाति या धर्म के आधार पर गालियां देते हैं, या नकारात्मक बातें सिखाते हैं, तो वे भी बड़े होकर वैसा ही सोचते हैं और किसी भी स्तर तक जा सकते हैं—यहां तक कि हत्या करने तक।

भारत-पाक तनाव और आतंकवाद का संदर्भ

हालिया समय में भारत और पाकिस्तान के बीच फिर से तनाव बढ़ा है, जिसकी जड़ें कई बार सीमापार आतंकवाद और कश्मीर को लेकर पाकिस्तान की रणनीति में दिखाई देती हैं। पहलगाम का यह हमला सिर्फ़ एक आतंकी घटना नहीं, बल्कि एक रणनीतिक संकेत भी हो सकता है—जो क्षेत्रीय अस्थिरता को हवा देता है और अमन-पसंद समाजों के बीच अविश्वास बढ़ाता है।

पाकिस्तान में सक्रिय कुछ चरमपंथी गुट इस्लाम का नाम लेकर भारत में हिंसा फैलाते हैं, जबकि अस्ल में उनका उद्देश्य केवल राजनीतिक है—धर्म का इस्तेमाल केवल लोगों की भावनाएं भड़काने के लिए किया जाता है। दुर्भाग्यवश, पाकिस्तान की सरकार और सेना का रवैया भी कभी-कभी इन गुटों के प्रति नरमी भरा रहता है। दोनों देशों को यह समझना होगा कि स्थायी शांति केवल टकराव से नहीं, बल्कि ईमानदार संवाद और कट्टरपंथ के ख़िलाफ़ साझा मोर्चा बनाकर ही लाई जा सकती है।

समाधान : शिक्षा, न्याय और नैतिक पुनर्निर्माण

इन सारी समस्याओं का समाधान केवल कठोर क़ानूनों में नहीं, बल्कि एक नैतिक पुनर्निर्माण में है। हमें अपने बच्चों को इन्सान की इज़्ज़त करना सिखाना होगा, हर धर्म के अनुयायी को बराबर सम्मान देना होगा। शिक्षा व्यवस्था में ऐसे पाठ जो दूसरों के धर्म और विचार की इज़्ज़त करना सिखाएं, अनिवार्य होने चाहिएं। मस्जिदों, मंदिरों, गुरुद्वारों, चर्चों और स्कूलों—सभी संस्थानों को नफ़रत के ख़िलाफ़ एकजुट खड़ा होना होगा। जब तक हम हिंसा की विचारधारा को जड़ से ख़त्म नहीं करेंगे, तब तक पहलगाम जैसी घटनाएं होती रहेंगी।

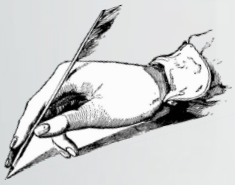
हरेक जान का हो सम्मान

हमारे लिए यह ज़रूरी है कि हम इन्सानी जान के सम्मान को सबसे ऊपर रखें। चाहे वह किसी हिंदू की हो, किसी मुसलमान की, किसी बौद्ध, ईसाई, सिख, यहूदी या जैन की—जान, जान होती है। उसका सम्मान हर हाल में किया जाना चाहिए।

जो लोग इस्लाम का नाम लेकर हिंसा करते हैं, वे इस्लाम के नहीं, बल्कि मानवता के सबसे बड़े दुश्मन हैं। क़ुरआन का पैग़ाम शांति, इंसाफ़ और इन्सानी करुणा का है—इसका इस्तेमाल नफ़रत और हत्या के लिए नहीं हो सकता।

हमें चाहिए कि हम लिखें, बोलें, और अमल करें—ताकि इन्सानी जान की क़ीमत दोबारा दुनिया को याद दिलाई जा सके। पहलगाम हमले के शिकार सैलानियों की आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते हुए हम यही संकल्प लें कि किसी भी धर्म, विचारधारा या राजनीतिक मक़सद के नाम पर किसी की जान न ली जाए—यही सच्ची इस्लामी तालीम है। ■■

(लेखिका इलाहाबाद उच्च न्यायालय में अधीवक्ता हैं।)



कविता

जंग न होने देंगे

अटल बिहारी बाजपेयी

हम जंग न होने देंगे!
विश्व शांति के हम साधक हैं, जंग न होने देंगे!

कभी न खेतों में फिर ख़ूनी खाद फलेगी, खलिहानों में नहीं मौत की फ़सल खिलेगी, आसमान फिर कभी न अंगारे उगलेगा, एटम से नागासाकी फिर नहीं जलेगी, युद्धविहीन विश्व का सपना भंग न होने देंगे। जंग न होने देंगे।

हथियारों के ढेरों पर जिनका है डेरा, मुंह में शांति, बगल में बम, धोखे का फेरा, कफ़न बेचने वालों से कह दो चिल्लाकर, दुनिया जान गई है उनका असली चेहरा, कामयाब हो उनकी चालें, ढंग न होने देंगे। जंग न होने देंगे।

हमें चाहिए शांति, ज़िंदगी हमको प्यारी, हमें चाहिए शांति, सृजन की है तैयारी, हमने छेड़ी जंग भूख से, बीमारी से, आगे आकर हाथ बटाए दुनिया सारी। हरी-भरी धरती को ख़ूनी रंग न लेने देंगे। जंग न होने देंगे।

भारत-पाकिस्तान पड़ोसी, साथ-साथ रहना है, प्यार करें या वार करें, दोनों को ही सहना है, तीन बार लड़ चुके लड़ाई, कितना महंगा सौदा, रूसी बम हो या अमेरिकी, ख़ून एक बहना है। जो हम पर गुज़री, बच्चों के संग न होने देंगे। जंग न होने देंगे।

जाति जनगणना और सामाजिक न्याय का सवाल



भारत जैसे विविध और बहुपरतीय समाज में जाति केवल सामाजिक पहचान नहीं, बल्कि ऐतिहासिक अन्याय, संसाधनों की असमानता और अवसरों की विषमता का भी प्रतीक है। ऐसे में यदि हम सामाजिक न्याय की संकल्पना को साकार करना चाहते हैं, तो सबसे पहला और आवश्यक क़दम यह होगा कि हम अपनी सामाजिक संरचना को आंकड़ों के आईने में देखें—ठोस, वस्तुनिष्ठ और प्रमाणिक रूप से। हाल में केंद्र सरकार द्वारा आगामी जनगणना में जाति गणना को शामिल करने का निर्णय स्वागतयोग्य और ऐतिहासिक है।

जाति गणना क्यों है आवश्यक?

जाति भारत में अब भी एक प्रमुख सामाजिक निर्धारक है। यह शिक्षा,

समसामयिक



जितेंद्र गौतम

रोज़गार, स्वास्थ्य सेवा, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और यहां तक कि विवाह-संबंधों तक को प्रभावित करती है। संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 16 के तहत समानता, भेदभाव का निषेध और सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की जो व्यवस्थाएं की गई हैं, वे तभी सार्थक होंगी जब उनकी आधारशिला सटीक और व्यापक आंकड़ों पर रखी जाए।

जाति आधारित आंकड़ों की अनुपलब्धता के कारण आज पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित संसाधनों का वितरण कई बार अनुमान और मनमानेपन पर आधारित होता है। उदाहरणस्वरूप, ओबीसी आरक्षण की सीमा 27% तय की गई थी, किंतु यह प्रतिशत किस सामाजिक और आर्थिक यथार्थ के आधार पर तय हुआ—इसका

कोई स्पष्ट आंकड़ा नहीं है। ऐसे में जाति जनगणना सामाजिक न्याय की नीतियों को अधिक वैज्ञानिक, सटीक और पारदर्शी बनाने का उपकरण बन सकती है।

ऐतिहासिक अन्याय की पहचान और उसे दुरुस्त करने का माध्यम

भारत में सदियों तक वर्णाश्रम व्यवस्था ने सामाजिक पदानुक्रम को स्थापित किया, जिसमें श्रम का विभाजन श्रमिकों का शोषण बन गया। दलित, आदिवासी और अन्य पिछड़े वर्ग—इन समुदायों को ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर डाला गया। संविधान निर्माताओं ने इन वर्गों को संरक्षित करने और मुख्यधारा में लाने के लिए अनेक प्रावधान किए, किंतु आज़ादी के 75 वर्षों बाद भी जब हम समानता के सपनों से दूर हैं, तो इसका एक बड़ा कारण यह है कि हमने असमानता के वास्तविक स्वरूप को आंकड़ों में दर्ज ही नहीं किया।

जाति जनगणना इसी कमी को दूर करने की दिशा में एक ठोस क़दम हो सकती है। यह न केवल पिछड़े समुदायों की जनसंख्या और स्थिति को रेखांकित करेगी, बल्कि यह भी उजागर करेगी कि किन समुदायों को नीति-निर्माण में स्थान नहीं मिला है, और क्यों।

तकनीक, पारदर्शिता और निष्पक्षता

आज जब भारत डिजिटल युग में प्रवेश कर चुका है, तो जाति जनगणना को भी पारंपरिक काग़ज़-क़लम से निकालकर तकनीकी और डिजिटल माध्यमों से जोड़ा जाना चाहिए। इंटरनेट-सक्षम उपकरण, प्रीलोडेड जाति विकल्प, बायोमेट्रिक सत्यापन, और रियल-टाइम डेटा संग्रहण जैसी व्यवस्थाएं इस प्रक्रिया को अधिक विश्वसनीय, तेज़ और सटीक बना सकती हैं।

इसके साथ-साथ जनगणना प्रक्रिया को राजनीतिक हेर-फेर से बचाना भी अत्यंत आवश्यक है। जातियों की पहचान और वर्गीकरण को वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित किया जाना चाहिए। अन्यथा यह प्रयास सामाजिक न्याय के बजाय राजनीतिक संख्या-गणित का औजार बन जाएगा, जो स्वयं सामाजिक न्याय की अवधारणा को आघात पहुंचा सकता है।

यदि हम सामाजिक न्याय की संकल्पना को साकार करना चाहते हैं, तो सबसे पहला और आवश्यक क़दम यह होगा कि हम अपनी सामाजिक संरचना को आंकड़ों के आईने में देखें—ठोस, वस्तुनिष्ठ और प्रमाणिक रूप से। हाल में केंद्र सरकार द्वारा आगामी जनगणना में जाति गणना को शामिल करने का निर्णय स्वागतयोग्य और ऐतिहासिक है।



आलोचनाओं का तर्क

जाति जनगणना के विरोध में यह तर्क दिया जाता है कि यह सामाजिक विभाजन को और गहरा कर सकती है, किंतु इन तर्कों का जवाब उन ऐतिहासिक उदाहरणों से मिलता है जहां जातिगत आंकड़े एकत्र करने से सामाजिक विद्वेष नहीं, बल्कि न्याय सुनिश्चित हुआ है। बिहार और तेलंगाना जैसे राज्यों ने हाल ही में जाति सर्वेक्षण कर यह दिखाया है कि पारदर्शी प्रक्रिया और राजनीतिक इच्छाशक्ति से यह कार्य सफलतापूर्वक

किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भारत 1951 से ही धर्म, भाषा और अनुसूचित जाति/जनजाति की गणना करता आ रहा है, और इससे कोई सामाजिक विद्वेष नहीं फैला। उलटे, इसने नीति निर्धारण को सशक्त बनाया है। जब तक असमानता है, तब तक उसका वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण करना विभाजन नहीं, बल्कि समावेश का कार्य है।

राष्ट्रीय एकता और संवैधानिक दायित्व

जाति जनगणना को केवल सामाजिक न्याय तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए, बल्कि इसे राष्ट्रीय एकता के सुदृढ़ीकरण के एक प्रयास के रूप में देखा जाना चाहिए। जब समाज के हाशिए पर खड़े व्यक्ति को यह विश्वास होता है कि राज्य उसकी पहचान को मान्यता दे रहा है और उसके कल्याण के लिए नीति बना रहा है, तब ही वह स्वयं को राष्ट्र के साथ जुड़ा महसूस करता है।

अनुच्छेद 15(4) और 16(4) राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए विशेष प्रावधान करने की अनुमति देते हैं, लेकिन यह कार्य तभी प्रभावी होगा जब पिछड़े वर्गों की यथार्थ स्थिति सामने लाई जाए। अतः जाति जनगणना कोई सामाजिक सौहार्द के विरुद्ध क़दम नहीं, बल्कि संवैधानिक दायित्व का निर्वहन है।

आंकड़े और नीतियां

नीति-निर्माण और आंकड़ों का गहरा संबंध होता है। जो मापा जाता है, वही प्रबंधित किया जा सकता है। यदि हम नहीं जानते कि कितने ओबीसी युवा उच्च शिक्षा में प्रवेश पा रहे हैं, या किन जातियों को अनुसूचित वर्ग में गिना गया है पर वे वंचित ही रह गए हैं, तो नीति बनाना केवल प्रतीकात्मक कार्य होगा। ऐसे में जातिगत आंकड़े सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण की प्रक्रिया को गति देंगे।

वर्तमान समय में जब सरकारी नौकरियों की संख्या घट रही है और निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ रही है, तो सामाजिक न्याय की अवधारणा को केवल आरक्षण तक सीमित नहीं रखा जा सकता। हमें नीति निर्माण के व्यापक आयामों में पिछड़े समुदायों की भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी, जिसमें जातिगत आंकड़े महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

यदि यह कार्य सच्ची निष्ठा से किया जाए, तो यह न केवल पिछड़े वर्गों के लिए न्याय का माध्यम बनेगा, बल्कि भारत को एक अधिक समावेशी, समतामूलक और प्रगतिशील राष्ट्र की दिशा में अग्रसर करेगा।



निर्णय का समय

जाति जनगणना केवल जनसंख्या की गणना नहीं है; यह देश की आत्मा के दर्पण में झांकने का अवसर है। यह उन लोगों को आवाज़ देने की कोशिश है, जिनकी आवाज़ सदियों से अनसुनी रही है। यह सामाजिक न्याय को केवल नारा नहीं, बल्कि नीति और व्यवहार में बदलने का माध्यम है।

इसलिए आवश्यकता है कि सरकार इस प्रक्रिया के लिए एक स्पष्ट समय-सीमा घोषित करे, पर्याप्त संसाधन आवंटित करे, और यह सुनिश्चित करे कि पूरी प्रक्रिया पारदर्शी, तकनीकी रूप से सक्षम और राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त हो। साथ ही, समाज के सभी वर्गों, ख़ासकर मीडिया, शैक्षणिक संस्थानों और नागरिक संगठनों को भी इस मुहिम में सकारात्मक भागीदारी निभानी चाहिए।

यदि यह कार्य सच्ची निष्ठा से किया जाए, तो यह न केवल पिछड़े वर्गों के लिए न्याय का माध्यम बनेगा, बल्कि भारत को एक अधिक समावेशी, समतामूलक और प्रगतिशील राष्ट्र की दिशा में अग्रसर करेगा। ■■

सांप्रदायिकता की प्रयोगशाला : पहलगाम, मीडिया और बहुसंख्यकवाद



जहां एक ओर पहलगाम हमले में 26 निर्दोष पर्यटकों की मौत से पूरा देश शोकग्रस्त है, वहीं दूसरी ओर, ऐसी कठिन परिस्थितियों में भी सांप्रदायिक ताक़तें आतंकवाद को एक धर्म विशेष से जोड़कर अल्पसंख्यकों को निशाना बना रही हैं और उन्हें बहुसंख्यक समाज की नज़रों में 'खलनायक' के रूप में प्रस्तुत कर रही हैं। उग्र राष्ट्रवाद की आड़ में ये सांप्रदायिक शक्तियां न सिर्फ़ अल्पसंख्यकों के ख़िलाफ़ ज़हर फैला रही हैं, बल्कि जातिगत भेदभाव, शोषण और असमानता के ख़िलाफ़ चल रहे आंदोलनों को भी बदनाम करने का हर संभव प्रयास कर रही हैं। ऐसे माहौल में सामाजिक न्याय के पक्षकारों को उग्र राष्ट्रवाद के ख़तरों को गंभीरता से समझना बेहद आवश्यक है, क्योंकि यह विचारधारा न केवल अल्पसंख्यक विरोधी है, बल्कि 'देशप्रेम' के नारों के शोर में सामाजिक सुधार और समानता



की मुहिम को भी कमज़ोर और कलंकित करती है।

हिंदुत्व समर्थकों के नफ़रत भरे पोस्ट सोशल मीडिया पर हर तरफ़ सुलग रहे हैं। एक नौजवान पर्यटक की लाश के पास शोक मना रही एक महिला–जो संभवतः उसकी पत्नी है–की तस्वीर के साथ एक कैप्शन ख़ूब शेयर किया जा रहा है–'धर्म पूछा, जाति नहीं'। किसी दूसरे हिंदुत्व समर्थक ने लिखा–'कश्मीर में धर्म पूछ कर हत्या'। एक अन्य पोस्ट कुछ यूं था–'वो हिंदुओं से सिर्फ़ नफ़रत करते हैं'। मुख्यधारा की मीडिया ने भी सांप्रदायिक आग में घी डालने का काम किया और एक हिंदी चैनल ने लिखा–'पहले आतंकियों ने कलमा पढ़ने के लिए कहा'। मीडिया ने बहुसंख्यक समाज को ख़ूब डराया कि 'आतंकवादियों ने कुछ पुरुषों के पैंट उतरवाए' और 'पुरुषों के प्राइवेट पार्ट चेक करने के बाद गोली मारी'। टीवी डिबेट के दौरान चिल्लाने और नाटकीय तरीक़े से हिंदुत्व के एजेंडे को आगे बढ़ाने वाले एक मशहूर न्यूज़-एंकर ने तो कश्मीर में हुए चुनाव को ही हिंसा

के लिए ज़िम्मेदार ठहरा दिया। मगर वह कहने का साहस नहीं दिखा सके कि कश्मीर की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी केंद्र सरकार के पास है और उसमें राज्य सरकार का बहुत ज़्यादा रोल नहीं है।

देश के अलग-अलग हिस्सों से ख़बरें आ रही हैं कि कई स्थानों पर पाकिस्तान-विरोधी रैलियों के बहाने अल्पसंख्यकों को निशाना बनाया जा रहा है और उनके धार्मिक स्थलों के पास आपत्तिजनक नारे लगाए जा रहे हैं। जबकि देश की राजधानी दिल्ली में कश्मीरी छात्र, कारीगर और मज़दूर असुरक्षित महसूस कर रहे हैं और उन्हें यह भय सता रहा है कि कहीं पहलगाम हमले के लिए उन्हें ही ज़िम्मेदार न ठहराया जाए। ऐसे में बाक़ी इलाक़ों का हाल स्वतः ही समझा जा सकता है। वह वाजिब सवाल, जिसे मीडिया नहीं उठा रहा है, यह है कि जब राजनेता समस्या का समाधान गंभीरता से खोजने के बजाय चुनावी रैलियों में पहलगाम त्रासदी पर भाषण देकर राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश कर रहे हैं, तो क्या यह व्यवहार दर्शाता है कि हम एक मज़बूत लोकतंत्र हैं? उसी तरह, जब विपक्ष के नेताओं के पुराने भाषणों को तोड़-मरोड़ कर सर्कुलेट किया जाता है ताकि वे चरमपंथियों का समर्थन करते प्रतीत हों, तो क्या इससे यह सिद्ध होता है कि हम एक स्वस्थ लोकतंत्र हैं? इन प्रश्नों में सांप्रदायिक ताक़तों की कोई दिलचस्पी नहीं है, क्योंकि उनका एजेंडा कुछ और ही है।

सांप्रदायिक शक्तियां ऐसा भयावह वातावरण तैयार कर रही हैं, जिसमें समस्याओं के समाधान का एकमात्र उपाय 'बल प्रयोग' और 'युद्ध' को प्रस्तुत किया जा रहा है। जो लोग राजनीतिक समस्याओं का समाधान संवाद और कूटनीतिक माध्यमों से खोजने के पक्षधर हैं तथा यह मानते हैं कि हिंसा का प्रतिकार हिंसा से नहीं किया जा सकता, उन्हें इन सांप्रदायिक ताक़तों द्वारा निशाना बनाया जा रहा है। शांति की बात करना एक अपराध घोषित कर दिया गया है।

सांप्रदायिक शक्तियां ऐसा भयावह वातावरण तैयार कर रही हैं, जिसमें समस्याओं के समाधान का एकमात्र उपाय 'बल प्रयोग' और 'युद्ध' को प्रस्तुत किया जा रहा है। जो लोग राजनीतिक समस्याओं का समाधान संवाद और कूटनीतिक माध्यमों से खोजने के पक्षधर हैं तथा यह मानते हैं कि हिंसा का प्रतिकार हिंसा से नहीं किया जा सकता, उन्हें इन सांप्रदायिक ताकतों द्वारा निशाना बनाया जा रहा है। शांति की बात करना एक अपराध घोषित कर दिया गया है।

आज राष्ट्रीय एकता के समक्ष हिंदुत्व ताक़तों की सांप्रदायिकता एक गंभीर संकट के रूप में खड़ी है। यह संकट तब और विकराल रूप धारण कर लेता है जब देश किसी बड़ी चुनौती का सामना कर रहा हो और कुछ तत्व अपनी नापाक गतिविधियों से समाज को विषाक्त करने का प्रयास करते हैं।

जान-बूझकर आतंकवाद को एक ख़ास धर्म से जोड़ा जा रहा है, जो न तो तार्किक है और न ही न्यायसंगत। बहुत सारे विद्वानों का मत है कि आतंकवाद को ख़त्म करने का एक बेहतर तरीक़ा यह भी है कि शोषण का चक्र समाप्त हो और राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक असमानताओं को दूर किया जाए। लेकिन भारत में सांप्रदायिक शक्तियां हर घटना को धर्म के चश्मे से देख रही हैं और हर त्रासदी के लिए पूरे अल्पसंख्यक समुदाय को ज़िम्मेदार ठहराने का षड्यंत्र रच रही हैं।

पहलगाम हमले में स्थानीय आदिल हुसैन शाह ने पर्यटकों की जान बचाते हुए अपनी जान दे दी, लेकिन उनकी क़ुर्बानी को साज़िशन भुला दिया गया। कश्मीरियों ने पर्यटकों की कितनी मदद की और इंसानियत का सबूत दिया, इस पर भी चादर डालने की पूरी कोशिश की गई। उग्र राष्ट्रवाद का यह विमर्श इशारा करता है कि एक गहरी साज़िश के तहत पहलगाम हमले की आड़ में सांप्रदायिक ज़हर फैलाकर नफ़रत की राजनीति को खाद-पानी दिया जा रहा है और सामाजिक न्याय की आवाज़ों को भी दबाने का प्रयास किया जा रहा है।

ऐसी अफ़वाहें फैलाने और अल्पसंख्यकों को 'दुश्मन' के रूप में चित्रित करने के पीछे सांप्रदायिकतावादियों का उद्देश्य यह संदेश देना था कि हिंदू समाज अपनी सुरक्षा के लिए एकजुट हो जाए और जातिगत असमानता पर चुप रहे, ताकि ऊंची जातियों का वर्चस्व क़ायम रह सके। जिस तरह देश की सुरक्षा अहम

है, उसी तरह देश के भीतर रह रहे लोगों के बीच बराबरी भी आवश्यक है। मगर समानता के प्रश्न से सांप्रदायिक शक्तियां लगातार कतराती रहती हैं।

यह कोई नई बात नहीं है। राष्ट्रीय आंदोलन से लेकर आज तक, सांप्रदायिक और ब्राह्मणवादी ताक़तों ने हमेशा कोशिश की है कि राष्ट्रवाद के नाम पर वंचितों को उनका हक़ लेने से रोका जाए। जब वंचित अपने अधिकारों के लिए लड़ते हैं तो उन पर यह आरोप लगाया जाता है कि वे देश को लेकर चिंतित नहीं हैं और 'देशहित' की जगह अपने 'निजी स्वार्थ' को तरजीह दे रहे हैं। ऐसे आरोप दलित-बहुजन नायकों जैसे फुले, पेरियार, आंबेडकर और लोहिया पर अलग-अलग समय में, अलग-अलग तरीक़ों से लगाए गए। मगर बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर इस पूरे खेल को भली-भांति समझते थे। उन्होंने आज़ादी के वक़्त लिखी गई अपनी पुस्तक 'राज्य और अल्पसंख्यक' में साफ़-साफ़ कहा था कि 'अल्पसंख्यक द्वारा सत्ता में हिस्सेदारी के किसी भी दावे को सांप्रदायिकता कहा जाता है, जबकि बहुसंख्यकों द्वारा पूरी सत्ता पर एकाधिकार करने को राष्ट्रवाद कहा जाता है।'

'राज्य और अल्पसंख्यक' पुस्तक से चार साल पहले, डॉ. आंबेडकर ने 18 जनवरी, 1943 को गोखले मेमोरियल हॉल, पूना में दिवंगत न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानाडे के 101वें जन्मदिन पर एक व्याख्यान दिया था। 'रानाडे, गांधी और जिन्ना' के नाम से मशहूर इस व्याख्यान में आंबेडकर ने उग्र राष्ट्रवाद के नाम पर चल रही सियासत की ओर इशारा किया और कहा कि भारत जैसे जाति-आधारित समाज में एक समाज सुधारक होना और जाति के ख़िलाफ़ लड़ाई लड़ना, एक राजनीतिक देशभक्त होने से भी कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण है, क्योंकि ब्राह्मणवादी व्यवस्था जातीय ग़ैर-बराबरी के ख़िलाफ़ बोलने वाले को 'घृणा' की निगाह से देखती है।

आज के संदर्भ में बाबा साहेब की यह बात और भी अधिक प्रासंगिक लगती है, क्योंकि हिंदुत्व के उभार के दौर में जाति से जुड़े प्रश्नों को हिंदू राष्ट्र के लिए ख़तरा समझा जाता है। यही एक बड़ा कारण है कि पहलगाम जैसे मामलों को भी न केवल अल्पसंख्यक-विरोधी विमर्श में बदला जा रहा है, बल्कि ब्राह्मणवादी ताक़तें यह भी चाहती हैं कि सांप्रदायिकता के शोर में समता के लिए चल रही लड़ाई को बदनाम कर दिया जाए, ताकि ऊंची जातियों का वर्चस्व बना रहे। इसलिए, यह समय की पुकार है कि दलित, आदिवासी, पिछड़ी जातियां और अल्पसंख्यक समुदायों के बीच पहले से कहीं अधिक मज़बूत 'सॉलिडेरिटी' स्थापित हो।

सांप्रदायिक विमर्श को बढ़ाने में हिंदुत्व के विचारक वी.डी. सावरकर की बड़ी भूमिका रही है। 1920 के आरंभिक दशक में लिखी गई उनकी पुस्तक 'हिंदुत्व' न केवल अल्पसंख्यक विरोधी है, बल्कि सामाजिक न्याय के भी ख़िलाफ़ है। इस पुस्तक में सावरकर ने बिना किसी झिझक के कहा कि "एक साझा शत्रु का दबाव ही एकमात्र ऐसी चीज़ है जो लोगों को राष्ट्र में और राष्ट्रों को राज्यों में बदल सकती है।"

सावरकर का राष्ट्रवाद का सिद्धांत संविधान-विरोधी भी है, क्योंकि उनका



मानना था कि किसी भी सामाजिक समूह के बीच तब तक एकता नहीं बन सकती जब तक कि उनके सामने कोई 'दुश्मन' न हो। यहां तक कि यदि कोई दुश्मन या बाहरी ख़तरा नज़र न भी आए, तो भी सावरकर-समर्थक उसे कृत्रिम रूप से गढ़ते हैं और उसका प्रचार करते हैं, जो संविधान में निहित बंधुत्व के सिद्धांत के सरासर ख़िलाफ़ है। यही वजह है कि हिंदुत्व समर्थक अल्पसंख्यक समाज को बात-बात पर निशाना बनाते हैं और प्रयास करते हैं कि जाति आधारित हिंदू समाज के शोषण के ख़िलाफ़ उठने वाली आवाज़ें धार्मिक उन्माद के शोर में दब जाएं। अल्पसंख्यकों को 'ग़ैर' के रूप में चित्रित करना उनकी रणनीतिक मजबूरी भी है, ताकि हिंदू समाज एकजुट रहकर उन्हें वोट देता रहे।

वहीं, सामाजिक न्याय के विमर्श से हिंदुत्व के उग्र राष्ट्रवाद को परेशानी इस कारण है कि यह विमर्श हिंदू एकता के खोखले दावों के सामने जाति-आधारित हिंदू समाज के गहरे भेदभाव और शोषण की ज़मीनी हक़ीक़त को उजागर करता है।

हिंदुत्व की राजनीति हमारे संविधान के ख़िलाफ़ इस वजह से भी है कि संविधान धर्म पर आधारित राजनीति का समर्थन नहीं करता, बल्कि यह धर्मनिरपेक्षता (सिक्यूलरिज़्म) के सिद्धांत पर आधारित है। हमारे देश की नागरिकता की अवधारणा धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र और समानता के सिद्धांतों पर आधारित है, जबकि सांप्रदायिक ताक़तें नागरिकता को धर्म के चश्मे से देखती हैं। वे भारत के अल्पसंख्यकों को संदेह की दृष्टि से देखते हैं और उनकी देशभक्ति पर सवाल उठाते हैं, जबकि विदेशों में बसे हिंदुओं की देशभक्ति पर बिना किसी प्रश्न के विश्वास करते हैं।

सांप्रदायिक मानसिकता इतिहास को भी धर्म-विशेष के संदर्भ में देखती है। वे आर्य, वैदिक और हिंदू संस्कृतियों को 'भारतीय' मानते हैं, जबकि इस्लाम और ईसाई धर्म, जिनका भारत में हज़ारों वर्षों का इतिहास है, को 'विदेशी' धर्म के रूप में प्रस्तुत करते हैं। सांप्रदायिकों के लिए अल्पसंख्यकों की वफ़ादारी तब तक संदिग्ध बनी रहती है जब तक वे बहुसंख्यकवादी संस्कृति में रंग नहीं जाते। उनके लिए अल्पसंख्यकों का इतिहास, संस्कृति, पहनावा, भोजन और जीवनशैली तक राष्ट्रीय संस्कृति के लिए 'ख़तरा' प्रतीत होती है।

भारत के उन इलाक़ों में, जहां अल्पसंख्यकों की जनसंख्या राष्ट्रीय औसत से अधिक है, वहां सुरक्षा के कड़े इंतिज़ाम हैं, लेकिन बुनियादी सुविधाओं की घोर कमी है। सांप्रदायिक सोच यह मानती है कि बहुसंख्यक समाज के हितों की रक्षा अल्पसंख्यकों को बदनाम कर और उन पर निरंतर दबाव डालकर की जा सकती है, मगर वे यह भूल जाते हैं कि न्याय, समानता और भाईचारा ही किसी भी राष्ट्र के आधार स्तंभ होते हैं। ■■

भारत के उन इलाक़ों में, जहां अल्पसंख्यकों की जनसंख्या राष्ट्रीय औसत से अधिक है, वहां सुरक्षा के कड़े इंतिज़ाम हैं, लेकिन बुनियादी सुविधाओं की घोर कमी है। सांप्रदायिक सोच यह मानती है कि बहुसंख्यक समाज के हितों की रक्षा अल्पसंख्यकों को बदनाम कर और उन पर निरंतर दबाव डालकर की जा सकती है, मगर वे यह भूल जाते हैं कि न्याय, समानता और भाईचारा ही किसी भी राष्ट्र के आधार स्तंभ होते हैं।

क्रान्ति साप्ताहिक और क्रान्ति मासिक के सभी पाठक

कृपया ध्यान दें !

अपना पूरा नाम : .....

पता : .....

पोस्ट ऑफिस : .....

डिस्ट्रिक्ट : .....स्टेट : .....पिन : .....

कांटेक्ट नंबर : .....

नीचे दिए गए व्हाट्सऐप नम्बर पर भेजने की मेहरबानी करें।

धन्यवाद!

व्हाट्सऐप नंबर : 98187 99223

नोट : अपना कांटेक्ट नंबर लिखना न भूलें।

दृष्टिकोण

संपादन प्रभाग

मणिपुर से कश्मीर तक, 'शांति एक खोज'



"और जब तुम देखो कि ज़ुल्म को ज़बान दी जा रही है और हक़ को ख़ामोश किया जा रहा है, तो समझ लो कि इम्तिहान का वक़्त है।'' (क़ुरआन, 4:135)

मूल प्रश्न

भारत की आत्मा उसके लोकतंत्र, विविधता और न्यायप्रियता में बसती है, लेकिन उसी भारत के दो कोनों, उत्तर में कश्मीर और उत्तर-पूर्व में मणिपुर में इंसाफ़ आज भी प्रतीक्षारत है। एक ओर अनुच्छेद-370 की समाप्ति के बाद कश्मीर में सरकार शांति का ढोल पीटती है, दूसरी ओर मणिपुर में लगभग ढाई वर्षों से चल रही हिंसा की कोई स्थायी ख़बर तक टीवी चैनलों पर नहीं आती। क्या हम केवल दिल्ली से दिखने वाले भारत को ही भारत मानते हैं?

मणिपुर में मई 2023 से शुरू हुई जातीय हिंसा ने सैकड़ों जानें लीं, हज़ारों बेघर हुए और स्त्रियों की अस्मिता को सरेआम कुचला गया। कुकी और मेइती समुदायों के बीच ज़मीन, पहचान और सत्ता को लेकर लंबे समय से दबा हुआ संघर्ष, अब खुले युद्ध में बदल चुका है।

राज्य सरकार पूरी तरह एक पक्षीय दिखाई दी, और केंद्र सरकार ने महीनों तक हस्तक्षेप नहीं किया। जब मणिपुर जल रहा था, प्रधानमंत्री की चुप्पी ने आग को और गहरा किया।

दूसरी ओर कश्मीर को वर्ष 2019 में विशेष दर्जे से वंचित कर केंद्र शासित प्रदेश बना दिया गया। उसके बाद मीडिया ने वहां 'विकास' 'शांति' और 'नया कश्मीर' जैसे जुमले गढ़े, लेकिन ज़मीनी सच्चाई ये है कि इंटरनेट पर पाबंदी, राजनीतिक क़ैदी, और बेरोज़गारी ने वहां की आत्मा को बंधक बना रखा है। कश्मीर के लिए इन्साफ़ की बात करने वाला अब 'आतंकवादी' घोषित होता है, और मणिपुर में न्याय की बात करने वाला 'राष्ट्रद्रोही'।

मीडिया का दोहरा चरित्र

कश्मीर में हर छोटी घटना को 'राष्ट्र विरोध' बताकर टीआरपी लूटी जाती है, जबकि मणिपुर में महिलाओं की निर्वस्त्र परेड, घरों का जलाया जाना और चर्चों का टूटना 'मौन कवरेज' के दायरे में आता है। सच्चाई यह है कि टेलीविज़न मीडिया का तंत्र पूरी तरह सत्ता की ज़ुबान बोलने लगा है। कश्मीर को कैमरों से घेरा गया, मणिपुर को कैमरों से ख़ाली कर दिया गया। हिंसा कहीं भी हो उसे सामने लाना मीडिया का कर्तव्य है। हिंसा को छुपाना भी एक प्रकार की हिंसा है।

एक को विशेष दर्जे से वंचित कर 'विकास की प्रयोगशाला' में बदला गया, दूसरे को जातीय घृणा की आग में जलते छोड़ दिया गया। दोनों ही राज्यों में मीडिया या तो मुखबिर बन गया या मूकदर्शक।

मणिपुर की आग ने 200 से अधिक

जानें लीं, 60,000 से ज़्यादा लोग विस्थापित हुए और हज़ारों घर, चर्च और मंदिर ख़ाक हो गए। नारी गरिमा को जिस तरह कुचला गया, निर्वस्त्र परेड, बलात्कार, कैमरे में क़ैद अमानवीय दृश्यों ने देश के न्यायप्रिय लोगों की आत्मा को झकझोर कर रख दिया था, लेकिन नहीं हिला कोई न्यूज़ रूम। न राष्ट्र रोया, न रिपब्लिक चिल्लाया।

जब मणिपुर में महिलाएं निर्वस्त्र घसीटी जा रही थीं, तो वही चैनल 'मोदी जी अमेरिका में कैसे छा गए' जैसे कार्यक्रम चला रहे थे। गोदी मीडिया की चुप्पी साज़िश बन गई। कश्मीर को 'सिक्योरिटी फ्रेम' में दिखाया गया और मणिपुर को 'ब्लैकआउट फ्रेम' में।

कश्मीर में 'विकास' के नाम पर चुप्पी थोपी गई है, मणिपुर में 'अंदरूनी मामला' कहकर लाशों को गिना भी नहीं गया। गोदी मीडिया का मौन, सत्ता की चुप्पी और न्याय की प्रतीक्षा-इन सबने मिलकर भारत की आत्मा को कठघरे में खड़ा कर दिया है।

एकरंगी राष्ट्रीयता

कश्मीर में हर विरोध को 'पाकिस्तान प्रेरित' कहा जाता है, लेकिन मणिपुर के जातीय विद्वेष को ''आंतरिक मामला'' बताकर छोड़ दिया गया। इस दोहरे मापदंड ने यह साबित किया कि भारत की राष्ट्रीयता एकरंगी और एकवर्णीय ढांचे में ढाली जा रही है। कश्मीर में जिन सुरक्षा बलों को पूरी स्वतंत्रता है, मणिपुर में वे असहाय दिखाई देते हैं। यह दर्शाता है कि भारत का शासक वर्ग अब संवैधानिकता की नहीं, राजनीतिक सुविधा की भाषा बोलता है।

एक राज्य में डर बेचकर राष्ट्रवाद कमाया गया, दूसरे राज्य को ख़ामोशी में डुबाकर राष्ट्र का 'चेहरा' साफ़ रखा गया। सवाल ये नहीं कि मणिपुर या कश्मीर में कौन सही है, सवाल ये है कि क्या हमने इंसाफ़ का तराज़ू तोड़ दिया है? यह केवल भौगोलिक नहीं, नैतिक विफलता है, जो दर्शाती है कि भारत अब न्याय के तराज़ू से नहीं, राजनीतिक लाभ के नक़्शे से देखा जाता है।

आशा की किरणें : ज़मीनी पहलें और नागरिक प्रतिरोध

मणिपुर में महिलाओं ने (मीरा पैबी) ने शांति के लिए जो मोर्चा संभाला, वह मणिपुर की आत्मा की ताक़त है। कश्मीर में सिविल सोसाइटी, वकील और छात्र संगठनों ने लगातार संवाद और इंसाफ़ की मांग उठाई है। इसी प्रकार कश्मीर में नागरिक समूह, वकील और छात्र संगठनों ने आवाज़ उठाई, रिपोर्ट तैयार कीं और अदालत का दरवाज़ा खटखटाया। ये वही भारत हैं जो ज़िंदा हैं—सरकारों से अलग, टीवी से परे, कैमरों से दूर।

शांति केवल सुरक्षा व्यवस्था या आंकड़ों से नहीं आती। वह तब आती है जब सच्चाई को स्वीकारा जाए, जब पीड़ितों की बात सुनी जाए, और जब सत्ता ख़ुद को जवाबदेह माने। न्याय के बिना शांति अस्थायी होती है और संवाद के बिना लोकतंत्र खोखला।

इन पहलों ने बताया कि जब संस्थाएं ख़ामोश हो जाती हैं, तब जनता को बोलना पड़ता है। यह नागरिक चेतना ही लोकतंत्र की अंतिम गारंटी है। शांति सत्ता की कृपा से नहीं आती, वह आम जनता के संघर्ष और साहस से उपजती है।

शांति केवल सुरक्षा व्यवस्था या आंकड़ों से नहीं आती। वह तब आती है जब सच्चाई को स्वीकारा जाए, जब पीड़ितों की बात सुनी जाए, और जब सत्ता ख़ुद को जवाबदेह माने। न्याय के बिना शांति अस्थायी होती है और संवाद के बिना लोकतंत्र खोखला।

शांति की बुनियाद : सच्चाई, संवाद और न्याय

''और मत झुको ज़ुल्म करने वालों की ओर, वरना आग तुम्हें छू लेगी...''

(क़ुरआन, 11:113)

कश्मीर और मणिपुर भारत के संविधान की दो परीक्षाएं हैं—क्या हम न्याय करेंगे या केवल सत्ता की रक्षा करेंगे? शांति केवल गोली और गोदी मीडिया से नहीं आती, वह आती है सच्चाई, संवाद और न्याय से। अगर भारत को शांति एवं एकता की तलाश है, तो उसे पहले इंसाफ़ से मिलना होगा। भारत तब तक एक नहीं बन सकता, जब तक वह अपने सबसे कमज़ोर, सबसे चुप, सबसे पीड़ित नागरिक की चीख़ नहीं सुनता।

मणिपुर और कश्मीर हमें चुनौती दे रहे हैं कि क्या हम सिर्फ़ राष्ट्रध्वज से प्यार करते हैं, या उन लोगों से भी जो उसे ओढ़कर रोते हैं? भारत को यह समझना होगा कि न्याय की अनुपस्थिति में कोई भी 'विकास' या 'शांति' टिकाऊ नहीं हो सकती। मणिपुर और कश्मीर दोनों हमें यह सबक़ दे रहे हैं कि समय रहते न्याय और संवाद की राह नहीं अपनाई गई, तो हम एक ऐसे मौन संकट की ओर बढ़ेंगे जहां हर कोना एक नया मणिपुर और हर घाटी एक नया कश्मीर बन सकती है। हमें यह बात भली-भांति समझनी होगी कि इतिहास तटस्थ नहीं होता। वह गवाह भी होता है और न्यायाधीश भी। वह केवल शासन की सफलता या विफलता नहीं, बल्कि समाज की संवेदनशीलता को भी दर्ज करता है। ■■

ई-लर्निंग और बदलता शैक्षिक परिदृश्य



शिक्षा



डॉ. प्रदीप कुमार

हमारे समय में शिक्षा का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ा है, लेकिन इसकी पहुंच अब भी असमानता की ज़ंजीरों में जकड़ी हुई है। गांव और शहर, ग़रीब और अमीर, सरकारी स्कूल और कॉन्वेंट स्कूल—इन सबके बीच शिक्षा का चेहरा अलग-अलग दिखता रहा है। परंतु अब इस भेदभाव को चुनौती देती एक अदृश्य लेकिन प्रभावशाली क्रांति ने जन्म लिया है—इसका नाम है ई-लर्निंग।

ई-लर्निंग यानी इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से प्राप्त शिक्षा—एक ऐसी प्रणाली जिसमें तकनीक की सहायता से ज्ञान का विस्तार होता है। कभी तकनीक केवल विज्ञान प्रयोगशालाओं या शहरी विद्यालयों तक सीमित थी, लेकिन अब यह हर विद्यार्थी की जेब में है—मोबाइल, टैबलेट और लैपटॉप के रूप में। चॉक और डस्टर की सीमा को पार कर हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं, जहां 'स्कूल' एक इमारत नहीं बल्कि एक लिंक बन चुका है—Zoom, Google Meet, BYJU'S, SWAYAM, Coursera आदि इसके उदाहरण हैं।

महामारी ने ई-लर्निंग को मजबूरी से अवसर में बदला और फिर इसने शिक्षा की मुख्यधारा में स्थायी स्थान बना लिया। अब यह न केवल एक माध्यम है, बल्कि एक नया अनुभव है, जो शिक्षण-पद्धति, सामाजिक संरचना और नीति-निर्माण तीनों को नए सिरे से गढ़ रहा है।

कोविड-19 महामारी ने जब पूरी दुनिया की रफ़्तार थाम दी, तब सबसे पहले स्कूलों की घंटियां ख़ामोश हुईं। शिक्षकों के हाथों से ब्लैकबोर्ड छिन गया और बच्चों के चेहरों से वह स्कूल वाली चहल-पहल लुप्त हो गई। लेकिन इसी ठहराव में इंटरनेट ने एक नई राह दिखाई। कक्षाएं ऑनलाइन हुईं, शिक्षक वेबकैम के सामने पढ़ाने लगे और छात्र अपने ही बेडरूम से "प्रेज़ेंट सर" कहने लगे।

यह परिवर्तन केवल एक अस्थायी उपाय नहीं था। महामारी ने ई-लर्निंग को मजबूरी से अवसर में बदला और फिर इसने शिक्षा की मुख्यधारा में स्थायी

स्थान बना लिया। अब यह न केवल एक माध्यम है, बल्कि एक नया अनुभव है, जो शिक्षण-पद्धति, सामाजिक संरचना और नीति-निर्माण तीनों को नए सिरे से गढ़ रहा है।

ई-लर्निंग ने शिक्षक और विद्यार्थी के रिश्ते को पुनर्परिभाषित किया है। अब शिक्षक केवल अध्यापक नहीं, बल्कि कंटेंट डिज़ाइनर और मार्गदर्शक बन चुके हैं। विद्यार्थी अब केवल पाठ रटने वाला नहीं, बल्कि खोजी और विश्लेषक भूमिका में है। कक्षा अब चार दीवारों में सीमित नहीं, बल्कि वैश्विक मंच बन चुकी है—जहां भारत का ग्रामीण छात्र भी हार्वर्ड या MIT के व्याख्यान सुन सकता है।

ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म इस सच्चाई को स्वीकार करते हैं कि हर छात्र की सीखने की गति और शैली अलग होती है। कोई दृश्य सामग्री से सीखता है, कोई ऑडियो से, तो कोई इंटरैक्टिव गेम्स से। इसलिए डिजिटल शिक्षा उन्हें उनके मुताबिक़ कंटेंट प्रदान करती है।

ऑनलाइन क्विज़, टेस्ट और प्रगति रिपोर्ट छात्रों को आत्म-मूल्यांकन का अवसर देती हैं, वहीं शिक्षकों को डेटा आधारित निर्णय लेने में सहायक बनती हैं। इससे शिक्षण-प्रक्रिया अधिक वैज्ञानिक और लक्षित बनती है। साथ ही, कंप्यूटर, सर्चिंग स्किल्स, वर्चुअल कम्युनिकेशन—ये सब अब शिक्षा का आवश्यक हिस्सा बन चुके हैं, जो छात्रों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार करते हैं।

लेकिन हर क्रांति अपने साथ चुनौतियां भी लाती है, और ई-लर्निंग के साथ सबसे बड़ी चुनौती है डिजिटल विभाजन। भारत जैसे देश में करोड़ों बच्चे अब भी ऐसे हैं जिनके पास न स्मार्टफ़ोन है, न इंटरनेट कनेक्टिविटी।



ई-लर्निंग ने शिक्षक और विद्यार्थी के रिश्ते को पुनर्परिभाषित किया है। अब शिक्षक केवल अध्यापक नहीं, बल्कि कंटेंट डिजाइनर और मार्गदर्शक बन चुके हैं। विद्यार्थी अब केवल पाठ रटने वाला नहीं, बल्कि खोजी और विश्लेषक भूमिका में है। कक्षा अब चार दीवारों में सीमित नहीं, बल्कि वैश्विक मंच बन चुकी है—जहां भारत का ग्रामीण छात्र भी हार्वर्ड या MIT के व्याख्यान सुन सकता है।

उनके लिए यह डिजिटल क्रांति एक और असमानता बनकर उभरती है। यदि संसाधन केवल कुछ हाथों में ही हैं, तो यह शिक्षा का लोकतंत्रीकरण नहीं, बल्कि उसका निजीकरण बन जाता है।

इसके अलावा, विद्यालय केवल ज्ञान का केंद्र नहीं होते, वे सामाजिकता, अनुशासन और व्यावहारिक सीख के भी स्रोत होते हैं। ई-लर्निंग इस अनुभव को पुनः प्रस्तुत नहीं कर सकता। खेल, सहपाठी संवाद, शिक्षक की आंखों में देखकर सवाल पूछना—इन मानवीय पहलुओं का डिजिटल विकल्प संभव नहीं।

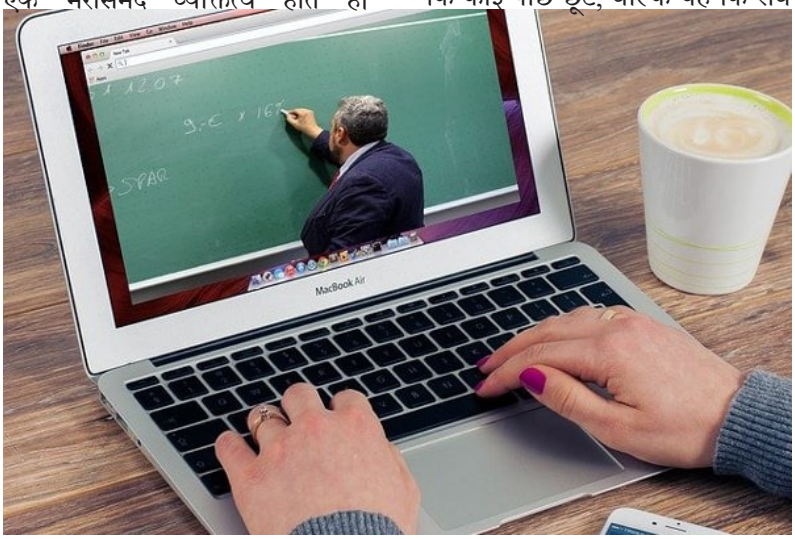
घंटों स्क्रीन के सामने बैठना बच्चों की आंखों, रीढ़ और मन पर प्रभाव डालता है। डिजिटल थकान आज एक मान्यता प्राप्त मनोवैज्ञानिक चुनौती बन चुकी है। इसके साथ ही, निजी ई-लर्निंग कंपनियों द्वारा शिक्षा का बाज़ारीकरण भी चिंता का विषय है। पेड कोर्स, सब्सक्रिप्शन मॉडल और विज्ञापनों से भरे हुए ऐप्स ने शिक्षा को उत्पाद बना दिया है—क्या अब भी ज्ञान निशुल्क और सार्वभौमिक है?

शिक्षा का मूल उद्देश्य यह नहीं कि कोई पीछे छूटे, बल्कि यह कि सब साथ चलें—भले कोई तेज़ चले, कोई धीरे। ई-लर्निंग तभी सफल होगी जब वह हर छात्र के लिए समान अवसर बन जाए। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शिक्षा केवल सूचना नहीं, बल्कि एक संवेदनशील, मानवीय संबंध है—जिसे कोई तकनीक पूरी तरह प्रतिस्थापित नहीं कर सकती। शिक्षा के इस डिजिटल युग में हमें यह याद रखना होगा—गूगल लेंस किताब की पंक्तियां तो पढ़ा सकता है, लेकिन शिक्षक की दृष्टि से झलकती करुणा और प्रेरणा को नहीं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने डिजिटल शिक्षा को प्राथमिकता दी है। DIKSHA, SWAYAM जैसे सरकारी प्लेटफॉर्म प्रयास कर रहे हैं कि डिजिटल कंटेंट क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध हो और सुलभ हो। लेकिन वास्तविकता यह है कि इन पहलों की गति धीमी है, जबकि निजी क्षेत्र की तकनीकी और बाज़ारगत स्पीड बहुत तेज़ है। जब तक राज्य अपनी भूमिका मज़बूती से नहीं निभाता, शिक्षा का रूप बाज़ारू होता जाएगा।

कई शिक्षकों से मेरी बातचीत हुई है। वे बताते हैं कि शुरुआत में कैमरे से पढ़ाना असहज अनुभव था, लेकिन अब वे वीडियो एडिट करते हैं, एनिमेशन जोड़ते हैं और छात्रों से चैट में संवाद करते हैं। यह बदलाव उन्हें भी सशक्त कर रहा है। फिर भी वे मानते हैं कि—"वो बच्चा जो सवाल पूछने से पहले दो बार आंखें उठाकर देखता था, अब कहीं खो गया है।"

शिक्षा में यह भावनात्मक संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षक केवल ज्ञान का स्रोत नहीं होते, वे एक मार्गदर्शक, एक भरोसेमंद व्यक्तित्व होते हैं।



डिजिटल शिक्षा में यह मानवीय रिश्ता बहुत हद तक धुंधला हो गया है।

शायद अब विद्यालयों का स्वरूप हमेशा के लिए बदल चुका है। भविष्य की कक्षा हाइब्रिड होगी—जहां शिक्षण-सत्र कक्षा में होगा और होमवर्क, मूल्यांकन, और संदर्भ सामग्रियां डिजिटल मंच पर। इससे सीखने की प्रक्रिया लचीली, सुलभ और निरंतर बनेगी।

शिक्षा अब पाठ्य-पुस्तकों की सीमाओं से बाहर निकल चुकी है। वह अब वीडियो, पॉडकास्ट, गेमिफिकेशन, और एआई टूल्स के साथ एक नया, समावेशी और रोचक स्वरूप ले रही है। लेकिन सवाल यह है कि क्या यह नया रूप सबके लिए समान रूप से सुलभ है?

ई-लर्निंग एक नई सुबह है—लेकिन वह सुबह केवल उनके लिए है जिनके पास साधन हैं। यदि यह क्रांति सबकी नहीं है, तो यह सशक्तिकरण नहीं, बल्कि वंचना बन जाती है। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि हर विद्यार्थी के पास उपकरण हो, हर गांव में इंटरनेट कनेक्टिविटी हो, और हर शिक्षक को तकनीकी प्रशिक्षण मिले।

शिक्षा का मूल उद्देश्य यह नहीं कि कोई पीछे छूटे, बल्कि यह कि सब साथ चलें—भले कोई तेज़ चले, कोई धीरे। ई-लर्निंग तभी सफल होगी जब वह हर छात्र के लिए समान अवसर बन जाए। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शिक्षा केवल सूचना नहीं, बल्कि एक संवेदनशील, मानवीय संबंध है—जिसे कोई तकनीक पूरी तरह प्रतिस्थापित नहीं कर सकती।

शिक्षा के इस डिजिटल युग में हमें यह याद रखना होगा—गूगल लेंस किताब की पंक्तियां तो पढ़ा सकता है, लेकिन शिक्षक की दृष्टि से झलकती करुणा और प्रेरणा को नहीं। ■■

संभावनाओं का क्षितिज

प्रकाश स्तंभ



अबरार हसन

"क्या वह जो जानता है और वह जो नहीं जानता है, दोनों बराबर हो सकते हैं?"—यह सवाल सिर्फ़ एक बौद्धिक कसौटी नहीं, बल्कि आत्मा की गहराई से उपजा वह प्रश्न है, जो इंसान को ख़ुद की तलाश में झोंक देता है। क़ुरआन की रूहानी ज़ुबान में यह प्रश्न बहुत स्पष्ट रूप में आया है—

"कह दीजिए : क्या वे जो जानते हैं और वे जो नहीं जानते हैं, बराबर हो सकते हैं?" (क़ुरआन, 39:9)

यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसका उत्तर ख़ुद इसमें छिपा है—और वह उत्तर है 'नहीं'। लेकिन यह 'नहीं' एक अहंकारजनित असमानता की घोषणा नहीं, बल्कि ज़िम्मेदारी, विनम्रता और सच्चे इल्म की पहचान है।

ज्ञान : वरदान भी, ज़िम्मेदारी भी

इल्म (ज्ञान) को क़ुरआन ने बार-बार एक रहमत, एक नूर और एक ज़िम्मेदारी के रूप में पेश किया है। वह व्यक्ति जिसे इल्म अता हुआ, उसका मुक़द्दर बदल गया। लेकिन उसके साथ ही उसके ऊपर एक ज़िम्मेदारी भी आयद हुई—वह इल्म को महज़ इख़्तियार नहीं, एक अमानत समझे।

"और उन लोगों से न कहो, जो तुम्हारे साथ सलामती से पेश आते हैं कि 'तुम मोमिन नहीं हो'—जबकि तुम दुनियावी जीवन का लाभ चाहते हो।" (क़ुरआन, 4:94)

इस आयत में भी संकेत है कि ज्ञान के आधार पर दूसरों को नीचा दिखाना, उन्हें तुच्छ समझना, यह ख़ुद इल्म के नूर को मलिन कर देता है। सच्चा इल्म वह है जो सिर नहीं, सिरा झुकाता है।

न जानने वाला : अंधकार नहीं, संभावनाओं का क्षितिज

क़ुरआन की दृष्टि में 'न जानना' कोई अपराध नहीं है। बल्कि 'लाअल-लाहुम याअक़िलून' (ताकि वे समझ सकें) जैसे अनेक स्थलों पर यह अपेक्षा की गई है कि इंसान अपनी अक़्ल और सोच को जगाए।

इल्म (ज्ञान) को क़ुरआन ने बार-बार एक रहमत, एक नूर और एक ज़िम्मेदारी के रूप में पेश किया है। वह व्यक्ति जिसे इल्म अता हुआ, उसका मुक़द्दर बदल गया। लेकिन उसके साथ ही उसके ऊपर एक ज़िम्मेदारी भी आयद हुई—वह इल्म को महज़ इख़्तियार नहीं, एक अमानत समझे।

"और हमने उनमें से बहुतों को जिन्न और इंसानों के लिए पैदा किया है; उनके दिल हैं, मगर समझते नहीं; आंखें हैं, मगर देखते नहीं; कान हैं, मगर सुनते नहीं..." (क़ुरआन, 7:179)

यहां इल्म की बात महज़ तथ्यों या सूचनाओं तक सीमित नहीं, बल्कि एक गहरी समझ और तदब्बुर (विचार) की ओर इशारा करती है। जो नहीं जानता, वह इल्ज़ाम के योग्य नहीं, बल्कि दावत का पात्र है—इल्म की दावत, नूर की दावत।

इल्म का अस्ल मिज़ाज : विनम्रता और हिदायत

इल्म, अगर अहंकार में ढल जाए, तो वह हिदायत नहीं, गुमराही बन जाता है। क़ुरआन बार-बार यह चेतावनी देता है–

"नहीं जानते वे जिनके दिलों में रोग है कि अल्लाह उनके द्वेष को उजागर कर देगा?" (क़ुरआन, 47:29)

सच्चा इल्म दिल को साफ़ करता है, घमंड को नहीं बढ़ाता। जानने वाला अगर नम्र है, तो वह इस इल्म का सही वारिस है। वह ख़ुद को दूसरों से ऊंचा नहीं समझता, बल्कि हर जिज्ञासु को उस नूर की ओर बुलाता है जिससे वह ख़ुद रोशन हुआ।

ज्ञान और अज्ञान का द्वंद्व नहीं, संवाद है

क़ुरआन ज्ञान और अज्ञान को दो विरोधी ध्रुवों की तरह पेश नहीं करता। बल्कि वह दोनों को एक यात्रा के अलग-अलग पड़ावों की तरह देखता है। जानने वाला भी एक समय अज्ञानी था–

"और अल्लाह ने तुम्हें तुम्हारी माताओं के पेट से निकाला, जबकि तुम कुछ न जानते थे, और उसने तुम्हें कान, आंखें और दिल दिए ताकि तुम कृतज्ञ बनो।" (क़ुरआन, 16:78)

यहां सीखने की यात्रा को ईश्वरीय कृपा बताया गया है। जानने वाला अगर अपने अतीत को याद रखेगा, तो

वह किसी अज्ञानी को कभी हीन नहीं मानेगा। वह उसे उसी यात्रा पर देखेगा, जिस पर वह स्वयं चला था।

इल्म और अमल का रिश्ता

इस्लामी दृष्टिकोण में इल्म का मूल्य तब तक अधूरा है जब तक वह अमल (आचरण) में न उतरे। क़ुरआन का सन्देश स्पष्ट है–

"कितने ही नबी ऐसे हुए, जिनके साथ बहुत-से अल्लाह वाले लड़े, तो उन्होंने जो कुछ उन्हें अल्लाह की राह में पहुंचा, उससे काहिली नहीं की और न ही दुर्बल हुए और न ही आत्म-समर्पण किया; और अल्लाह सब्र करने वालों को पसंद करता है।" (क़ुरआन, 3:146)

यहां इल्म के साथ सब्र, संघर्ष और आचरण की मांग की गई है। केवल जानने से कोई महान नहीं बनता, बल्कि जो जानकर उसे अपने जीवन में उतारता है—वही वास्तव में ज्ञानी है।

इख़लास और नीयत : इल्म का अस्ली तराज़ू

अंततः, इल्म और जहालत (अज्ञान) का फ़ैसला किसी किताब की पढ़ाई से नहीं, बल्कि नीयत और इख़लास (निष्ठा) से होता है।

"और उन्होंने आदेश नहीं दिया गया था, सिवाय इसके कि वे ईश्वर की इबादत करें, उसे एकनिष्ठ होकर, दीन को उसी के लिए करते हुए..."

(क़ुरआन, 98:5)

जो नहीं जानता, पर जानना चाहता है—वह उस व्यक्ति से बेहतर हो सकता है, जो जानता है, पर जानने के घमंड में इबादत से दूर हो गया है।

सच्चा ज्ञानी कौन?

क़ुरआन की नज़र में सच्चा ज्ञानी वह है जो अपने इल्म से दूसरों की राह रोशन करे–

"उसने पानी बरसाया आकाश से, फिर नदियां बह निकलीं अपनी-अपनी धाराओं के अनुसार, और प्रवाह ने झाग को ऊपर ला दिया..."

(क़ुरआन, 13:17)

यहां इल्म की मिसाल दी गई है कि जैसे पानी जीवन देता है, वैसे ही सच्चा इल्म लोगों के दिलों को रौशन करता है, लेकिन अगर उसमें झाग हो—यानी घमंड, दिखावा, निजता—तो वह नापाक है।

> **इल्म और जहालत के बीच फ़र्क़ है, लेकिन यह फ़र्क़ जातीय या सामाजिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और नैतिक है। वह व्यक्ति जो नहीं जानता पर जानने की तलब रखता है, वह बहुत जल्द उस 'जानने वाले' से ऊपर उठ सकता है जिसने इल्म को अपनी जेब में रख लिया है, लेकिन दिल में नहीं।**

एक साझा यात्रा की ओर

जानने वाला और न जानने वाला दोनों एक ही रूहानी यात्रा के दो सहयात्री हैं। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि एक ने रोशनी देख ली है, और दूसरा उसकी ओर बढ़ रहा है। अगर जानने वाला सच्चा है, तो वह जानने से पहले सेवा करना सीखेगा। और अगर न जानने वाला सच्चा है, तो उसकी प्यास उसे नूर तक पहुंचाएगी।

क़ुरआन हमें बार-बार याद दिलाता है–

"वह जो जीवितों को चेतावनी देने वाला है और जिन पर बात पूरी हो गई है, उनपर (अज़ाब के रूप में)। क्या तुम मुर्दों को सुना सकते हो, या बहरों को पुकार सकते हो जब वे मुंह फेर लें?"

(क़ुरआन, 27:80)

इसमें साफ़ है कि सुनना, समझना, और फिर उस पर चलना—यह एक चयन है, और इसी चयन से तय होता है कि कौन जानने वाला है, और कौन जानकर भी अज्ञान में है।

इल्म और जहालत के बीच फ़र्क़ है, लेकिन यह फ़र्क़ जातीय या सामाजिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और नैतिक है। वह व्यक्ति जो नहीं जानता पर जानने की तलब रखता है, वह बहुत जल्द उस 'जानने वाले' से ऊपर उठ सकता है जिसने इल्म को अपनी जेब में रख लिया है, लेकिन दिल में नहीं।

और आख़िर में, क़ुरआन एक सौम्य आवाज़ में पूछता है–

"क्या वे लोग जो जानते हैं और वे जो नहीं जानते, बराबर हो सकते हैं?"

यह सवाल हर दौर के हर व्यक्ति के लिए एक आह्वान है—इल्म को तलाशो, उसे अपनाओ, और उससे दुनिया को रोशन करो। ■■

भीषण गर्मी में सेहतमंद रहने के आसान उपाय



सेहत

संपादन प्रभाग

इस समय उत्तर भारत में भीषण गर्मी का प्रकोप जारी है। यह समय न केवल मौसम के असहनीय होने का होता है, बल्कि स्वास्थ्य के लिहाज़ से भी कई चुनौतियों को जन्म देता है। तेज़ तापमान, भारी पसीना, भोजन और पानी में तेज़ी से होने वाला संक्रमण, तथा लगातार बदलते मौसम के कारण अनेक बीमारियों का ख़तरा बढ़ जाता है। अगर हम समय रहते सावधानी नहीं बरतें तो मामूली दिखने वाली स्वास्थ्य समस्याएं भी गंभीर रूप ले सकती हैं। आइए विस्तार से जानें कि गर्मी के इस महीने में कौन-कौन-सी बीमारियां आम तौर पर होती हैं और उनसे कैसे बचा जा सकता है।

हीट स्ट्रोक (लू लगना)

हीट स्ट्रोक गर्मियों की सबसे गंभीर स्वास्थ्य समस्या मानी जाती है। जब शरीर अत्यधिक गर्मी के कारण अपने तापमान को नियंत्रित नहीं कर पाता, तब यह स्थिति उत्पन्न होती है। शरीर का तापमान सामान्य से बहुत अधिक (104°F से ऊपर) हो जाता है, जिससे सिर दर्द, चक्कर आना, त्वचा का लाल होना, भ्रम की स्थिति, बेहोशी और कभी-कभी मृत्यु भी हो सकती है।

बचाव

• धूप में निकलने से बचें, विशेषकर दोपहर 12 बजे से 4 बजे के बीच।

• हल्के रंग के, ढीले और सूती कपड़े पहनें।

• पानी और अन्य तरल पदार्थ प्रचुर मात्रा में लेते रहें।

• सिर को ढककर रखें और छायादार जगहों का उपयोग करें।

• आवश्यकता पड़ने पर ओआरएस घोल या नींबू-पानी का सेवन करें।

डिहाइड्रेशन (निर्जलीकरण)

जून की भीषण गर्मी में शरीर से अत्यधिक पसीना निकलता है। यदि शरीर को आवश्यक पानी और इलेक्ट्रोलाइट्स नहीं मिलते, तो डिहाइड्रेशन यानी निर्जलीकरण की समस्या हो सकती है। इसके लक्षणों में प्यास लगना, पेशाब कम आना, चक्कर आना, थकान और त्वचा का सूखा होना शामिल है।

बचाव

• दिनभर पर्याप्त मात्रा में पानी पीते रहें, चाहे प्यास लगे या न लगे।

• घर से बाहर निकलते समय पानी



की बोतल साथ रखें।

• अधिक पसीना आने पर नमक और चीनी मिश्रित घरेलू घोल का सेवन करें।

• कॉफ़ी, चाय और शराब जैसे डिहाइड्रेशन बढ़ाने वाले पेय से बचें।

फूड पॉयज़निंग

गर्मी में खाद्य पदार्थ जल्दी ख़राब हो जाते हैं। दूषित भोजन या पानी के सेवन से फूड पॉयज़निंग का ख़तरा बढ़ जाता है। इससे उल्टी, दस्त, पेट दर्द और बुख़ार जैसी समस्याएं होती हैं। बच्चों और वृद्धों के लिए यह विशेष रूप से ख़तरनाक हो सकता है।

बचाव

• घर का ताज़ा बना खाना खाएं और बासी भोजन से बचें।

• स्ट्रीट फूड और खुले में रखे भोजन से दूरी बनाए रखें।

• खाने से पहले और शौच के बाद हाथ धोना आदत बनाएं।

• सब्जियों और फलों को अच्छे से धोकर ही खाएं।

• दूध, दही और मांसाहारी पदार्थों को उचित तापमान पर रखें।

जोड़ दर्द और गठिया की समस्या

हालांकि गठिया को आमतौर पर सर्दी से जोड़कर देखा जाता है, लेकिन जून जैसी उमस भरी गर्मी भी पुराने जोड़ दर्द को बढ़ा सकती है। नमी के बढ़ने से शरीर की सूजन बढ़ती है, जिससे जोड़ों में जकड़न और दर्द बढ़ सकता है। जिन लोगों को ऑस्टियोआर्थराइटिस या रूमेटॉयड आर्थराइटिस की शिकायत है, उन्हें इस मौसम में अधिक सतर्क रहना चाहिए।

बचाव

• नियमित हल्की-फुल्की कसरत करें ताकि जोड़ों में रक्त संचार बना रहे।

• शरीर को हाइड्रेटेड रखें।

• भारी व्यायाम या असहज मुद्राओं से बचें।

• दर्द या सूजन बढ़ने पर डॉक्टर की सलाह लें।

त्वचा संक्रमण

गर्मी और उमस त्वचा संक्रमण के लिए आदर्श वातावरण बनाते हैं। फंगल इन्फेक्शन, बैक्टीरियल संक्रमण, फोड़े-फुंसी, दाद, घमौरियां, त्वचा पर चकत्ते आदि आम समस्याएं बन जाती हैं।

बचाव

• शरीर को सूखा और साफ़ रखें।

• प्रतिदिन स्नान करें और पसीने वाले कपड़े बार-बार बदलें।

• सिंथेटिक कपड़ों के बजाय सूती कपड़ों का प्रयोग करें।

• एंटी-फंगल पाउडर या क्रीम का प्रयोग कर सकते हैं।

• भीड़भाड़ वाले और गंदे स्थानों से बचें।

डायरिया और पेट के संक्रमण

भीषण गर्मी में दूषित पानी और खानपान के चलते डायरिया और अन्य गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल संक्रमण तेज़ी से फैलते हैं। यह बच्चों और कमज़ोर प्रतिरक्षा प्रणाली वाले लोगों के लिए बेहद ख़तरनाक साबित हो सकते हैं। डायरिया में शरीर से अत्यधिक पानी और लवण बाहर निकल जाते हैं, जिससे तेज़ी से कमज़ोरी आ जाती है।

बचाव

• केवल साफ़ और उबला हुआ पानी पीएं।

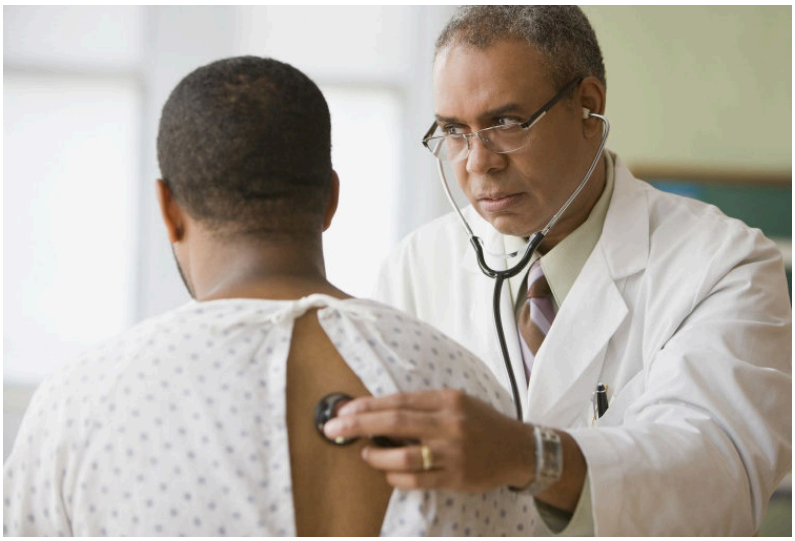
• बाहर का कटा-फटा या खुला खाना बिल्कुल न खाएं।

• खाने से पहले हाथ धोने की आदत डालें।

• दस्त होने पर ओआरएस का सेवन करें और तुरंत चिकित्सा सलाह लें।

सांस की समस्याएं

उमस और गर्मी एलर्जी, अस्थमा और अन्य श्वसन समस्याओं को बढ़ा सकती है। धूल के कण, पराग और प्रदूषण के उच्च स्तर के कारण सांस



मई-जून का महीना अपने साथ सिर्फ़ गर्मी ही नहीं, बल्कि कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं भी लेकर आता है। किंतु सही जानकारी, समय पर सावधानी और थोड़ी-सी सतर्कता से इन बीमारियों से बचा जा सकता है। शरीर को पर्याप्त पानी देना, संतुलित आहार लेना, स्वच्छता बनाए रखना और धूप से बचाव करना जून में स्वस्थ रहने के मुख्य मंत्र हैं।



लेना कठिन हो जाता है। जिन लोगों को पहले से दमा या ब्रोंकाइटिस की समस्या है, उनके लिए यह मौसम ज़्यादा चुनौतीपूर्ण होता है।

बचाव

• मास्क पहनकर बाहर निकलें, ख़ासकर धूल भरे इलाक़ों में।

• घर को साफ़-सुथरा और वेंटिलेटेड रखें।

• नमी और फफूंदी से बचने के लिए समय-समय पर सफ़ाई करें।

• डॉक्टर द्वारा बताए गए इनहेलर या दवाओं का नियमित उपयोग करें।

आंखों का संक्रमण (कंजंक्टिवाइटिस)

गर्मी में पसीना, धूल और गंदगी के कारण आंखों में संक्रमण होना आम बात है। कंजंक्टिवाइटिस में आंखें लाल हो जाती हैं, पानी आने लगता है और खुजली महसूस होती है। यह संक्रमण तेज़ी से फैल सकता है।

बचाव

• आंखों को बार-बार गंदे हाथों से न छुएं।

• धूप में निकलते समय सनग्लास का प्रयोग करें।

• संक्रमित व्यक्ति के संपर्क से बचें।

• किसी भी प्रकार की परेशानी होने पर तुरन्त नेत्र चिकित्सक से संपर्क करें।

मई-जून का महीना अपने साथ सिर्फ़ गर्मी ही नहीं, बल्कि कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं भी लेकर आता है। किंतु सही जानकारी, समय पर सावधानी और थोड़ी-सी सतर्कता से इन बीमारियों से बचा जा सकता है। शरीर को पर्याप्त पानी देना, संतुलित आहार लेना, स्वच्छता बनाए रखना और धूप से बचाव करना जून में स्वस्थ रहने के मुख्य मंत्र हैं। याद रखें, सावधानी ही सुरक्षा है—और यही इस गर्मी को आनंदमय बनाने का सबसे सरल उपाय है। ■■



Whatsapp (9818799223) your complete address with screenshot of payment

ऑनलाइन जॉब में करियर को दें नई दिशा



आज की डिजिटल दुनिया में करियर के विकल्प भी डिजिटल हो चले हैं। वैसे तो ऑनलाइन कमाई कोई नई बात नहीं, लेकिन कोविड-19 के दौर में जब दुनिया घरों में बंद हो गई, तब इंटरनेट ने रोज़गार की दुनिया को एक नई दिशा दी। लॉकडाउन ने जहां आर्थिक गतिविधियों को थाम दिया था, वहीं ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स ने लाखों लोगों के लिए रोज़गार के नए दरवाज़े खोल दिए। आज भी यह ट्रेंड कम नहीं हुआ है, बल्कि और भी तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। यह न केवल फुल टाइम कमाई का विकल्प है, बल्कि पार्ट टाइम और अतिरिक्त आय का बेहतरीन माध्यम भी बन चुका है।

ऑनलाइन काम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे घर बैठे, अपनी सुविधा और समय के अनुसार किया जा सकता है। अगर आप प्रतिदिन चार

करियर
संपादन प्रभाग

से पांच घंटे समर्पित करते हैं, तो आप महीने में ₹10,000 से ₹15,000 तक की कमाई कर सकते हैं। लेकिन मेहनत और समर्पण के आधार पर यह कमाई कई गुना बढ़ भी सकती है। आइए, जानते हैं ऐसे कुछ प्रमुख ऑनलाइन जॉब्स के बारे में, जिनके ज़रिए आप न केवल आर्थिक रूप से सशक्त हो सकते हैं, बल्कि अपना ख़ुद का डिजिटल करियर भी बना सकते हैं।

1. डेटा एंट्री जॉब

ऑनलाइन जॉब्स की दुनिया में सबसे ज़्यादा लोकप्रिय जॉब्स में से एक है डेटा एंट्री। इसमें कंपनियां आपको कुछ विशेष फॉर्मेट में डेटा देती हैं जिसे MS Word या Excel जैसे टूल्स में टाइप करना होता है। इस काम के लिए इंग्लिश टाइपिंग का अच्छा ज्ञान और कंप्यूटर की बुनियादी समझ आवश्यक है।

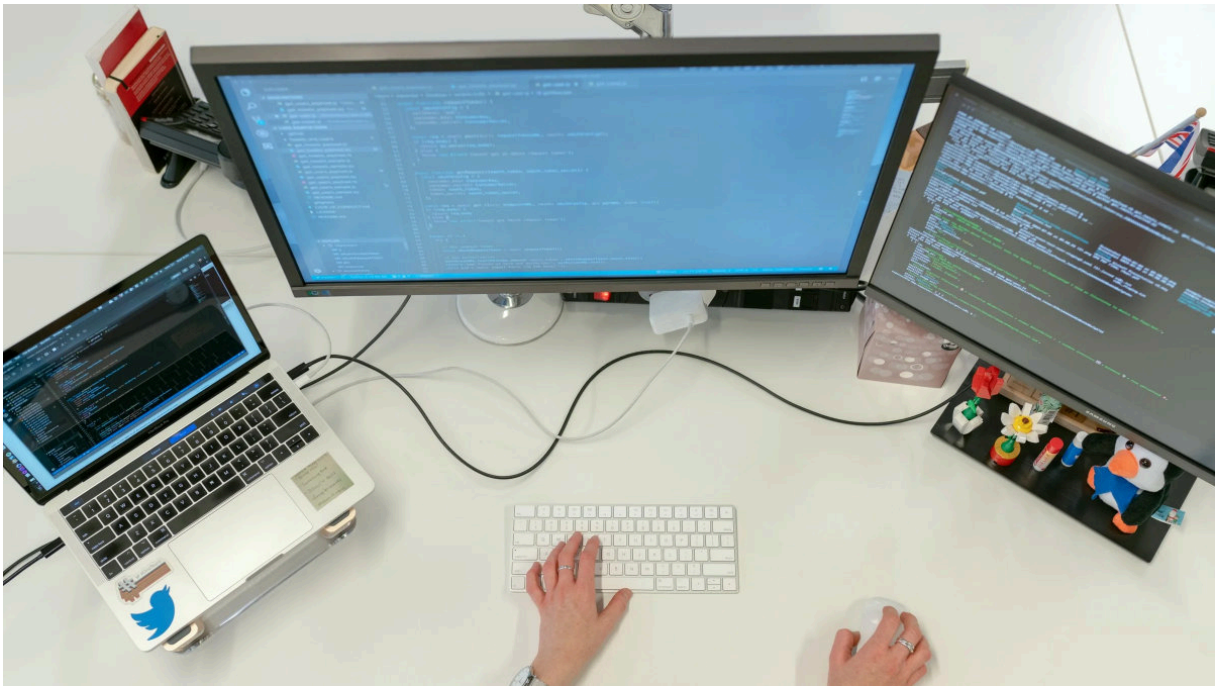
यह जॉब पार्ट टाइम और फुल टाइम दोनों तरीक़ों से की जा सकती है। ध्यान रहे कि डेटा एंट्री के नाम पर कई फ़र्ज़ी वेबसाइटें भी होती हैं, इसलिए केवल प्रमाणित और जानी-पहचानी साइट्स से ही जुड़ें।

2. ऑनलाइन फॉर्म फिलिंग

इस कार्य में कंपनियां या एजेंसियां आपको फॉर्म भेजती हैं जिन्हें ऑनलाइन भरना होता है। इसमें व्यक्तिगत या व्यावसायिक जानकारी दी जाती है जिसे एक तय फॉर्मेट में डालना होता है। इसके लिए इंटरनेट ब्राउज़िंग, बेसिक कंप्यूटर नॉलेज और धैर्य की आवश्यकता होती है। कुछ कंपनियां प्रशिक्षण भी देती हैं।

3. क्लासिफाइड वेबसाइट्स पर विज्ञापन पोस्ट करना

यह काम विज्ञापन एजेंसियों के साथ जुड़कर किया जा सकता है। अलग-अलग कंपनियों के उत्पादों और सेवाओं के विज्ञापन क्लासिफाइड वेबसाइट्स



(जैसे OLX, Quikr, आदि) पर पोस्ट करने होते हैं। जितने अधिक विज्ञापन आप पोस्ट करेंगे, उतनी अधिक कमाई का अवसर मिलता है। यह कार्य घर बैठे किया जा सकता है, और यदि आपके पास कंप्यूटर नहीं है तो साइबर कैफे से भी इसे अंजाम दिया जा सकता है।

4. SMS या मैसेज सेंड करने की जॉब

आजकल कई कंपनियां अपने प्रचार के लिए मोबाइल मैसेज का सहारा लेती हैं। इसमें एक व्यक्ति को कंपनी की ओर से तैयार किए गए मैसेज को सैकड़ों नंबरों पर भेजना होता है। यह कार्य बेहद आसान है और थोड़े-से समय में पूरा किया जा सकता है। यह काम पार्ट टाइम इनकम के लिए आदर्श है, लेकिन कंपनियों के विश्वसनीय होने की पुष्टि पहले ज़रूर कर लें।

5. सॉफ्टवेयर डेवलपर

आईटी सेक्टर से जुड़े लोगों के लिए यह एक सुनहरा अवसर है। यदि आप सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट, ऐप डेवलपमेंट या वेब डेवलपमेंट जानते हैं तो आप घर बैठे ऑनलाइन फ्रीलांस प्रोजेक्ट्स ले सकते हैं। कई फ्रीलांस वेबसाइट्स जैसे Upwork, Free-lancer, Fiverr आदि पर छोटे-बड़े प्रोजेक्ट्स उपलब्ध होते हैं। यहां पर काम का भुगतान प्रोजेक्ट के हिसाब से होता है और अच्छी स्किल वाले लोगों की बहुत मांग है।

ऑनलाइन काम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे घर बैठे, अपनी सुविधा और समय के अनुसार किया जा सकता है। अगर आप प्रतिदिन चार से पांच घंटे समर्पित करते हैं, तो आप महीने में ₹10,000 से ₹15,000 तक की कमाई कर सकते हैं। लेकिन मेहनत और समर्पण के आधार पर यह कमाई कई गुना बढ़ भी सकती है।

6. ग्राफ़िक डिज़ाइनिंग

आज का डिजिटल युग विज़ुअल अपील का युग है। हर वेबसाइट, सोशल मीडिया पेज, या ऐप को ग्राफ़िक डिज़ाइनिंग की ज़रूरत होती है। यदि आपके पास Adobe Photoshop, Illustrator, CorelDRAW जैसे टूल्स का ज्ञान है और आप क्रिएटिव हैं, तो आप ग्राफ़िक डिज़ाइनिंग से अच्छा पैसा कमा सकते हैं। मीडिया हाउस, फ़िल्म कंपनियां, विज्ञापन एजेंसियां और सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर्स ग्राफ़िक डिजाइनरों की तलाश में रहते हैं।

7. फ्रीलांस राइटिंग

लिखना आपका जुनून है और विचारों की धार तीव्र है, तो फ्रीलांस राइटिंग आपके लिए एक आदर्श क्षेत्र हो सकता है। कंटेंट राइटिंग, ब्लॉग लेखन,



कॉपी राइटिंग, स्क्रिप्ट राइटिंग, न्यूज़ रिपोर्टिंग जैसी अनेक विधाओं में आप अपनी सेवाएं दे सकते हैं। आपकी भाषा पर पकड़, व्याकरण की समझ और रचनात्मक दृष्टिकोण आपको इस क्षेत्र में सफल बना सकता है। कई वेबसाइट्स और समाचार पोर्टल नियमित रूप से राइटर्स की तलाश में रहते हैं।

8. ऑनलाइन ट्रांसलेटर

यदि आप हिंदी, अंग्रेज़ी के साथ-साथ किसी अन्य विदेशी भाषा जैसे फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश, जापानी आदि में दक्ष हैं, तो ऑनलाइन ट्रांसलेशन आपके लिए बेहतरीन विकल्प है। यह कार्य विभिन्न वेबसाइट्स, कंपनियों और एजेंसियों से मिलता है जिन्हें दस्तावेज़ों, लेखों या सबटाइटल का अनुवाद करवाना होता है। इस क्षेत्र में प्रति शब्द या प्रति पृष्ठ के आधार पर भुगतान किया जाता है, जो अन्य फ्रीलांस कामों की तुलना में अधिक होता है।

9. डिजिटल मार्केटिंग

आज हर ब्रांड और कंपनी डिजिटल प्लेटफॉर्म पर अपनी पहचान बनाना चाहती है। इसके लिए डिजिटल मार्केटिंग प्रोफेशनल्स की भारी मांग है। सर्च इंजन ऑप्टिमाइज़ेशन (SEO), सोशल मीडिया मार्केटिंग (SMM), ईमेल मार्केटिंग, कंटेंट मार्केटिंग, Google Ads आदि जैसे कार्यों की जानकारी होने पर आप घर बैठे अच्छी आय कर सकते हैं। कई संस्थान डिजिटल मार्केटिंग में सर्टिफिकेट कोर्स भी ऑफ़र करते हैं, जिनसे स्किल बढ़ाई जा सकती है।

ऑनलाइन दुनिया में करियर की संभावनाएं असीमित हैं। चाहे आप विद्यार्थी हों, गृहिणी हों, बेरोज़गार हों या नौकरीपेशा—हर वर्ग के लिए यहां कुछ न कुछ ज़रूर है। ज़रूरत है केवल अपनी रुचियों, क्षमताओं और समय का सही प्रयोग करने की।

10. ऑनलाइन ट्यूटर या एजुकेटर

यदि आप किसी विषय में पारंगत हैं, तो आप ऑनलाइन ट्यूटरिंग के ज़रिए छात्रों को पढ़ा सकते हैं। भारत में Byju's, Vedantu, Unacademy जैसे प्लेटफॉर्म्स घर बैठे अध्यापन के अवसर प्रदान करते हैं। इसके अलावा, आप ख़ुद का YouTube चैनल शुरू कर सकते हैं या Zoom/Google Meet के माध्यम से क्लास ले सकते हैं।

ऑनलाइन दुनिया में करियर की संभावनाएं असीमित हैं। चाहे आप विद्यार्थी हों, गृहिणी हों, बेरोज़गार हों या नौकरीपेशा—हर वर्ग के लिए यहां कुछ न कुछ ज़रूर है। ज़रूरत है केवल अपनी रुचियों, क्षमताओं और समय का सही प्रयोग करने की।

याद रखिए, ऑनलाइन दुनिया में काम करने का सबसे बड़ा मंत्र है–"कौशल + समय = सफलता"। जितना आप ख़ुद को अपडेट करेंगे और तकनीकी ज्ञान को अपनाएंगे, उतनी ही तेज़ी से आपकी डिजिटल यात्रा आगे बढ़ेगी। ■■



कहानी

सुफ़ियान अहमद



‘आई’ और ‘एआई’ के बीच एक अनदेखी कड़ी

“कान्ति के उपसंपादक” सुफ़ियान अहमद द्वारा लिखित यह कहानी एक नए युग की शुरुआत की ओर इशारा करती है, साथ ही कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), मानवता और तकनीक के आपसी संबंधों पर गहरे सवाल भी उठाती है।

मैं कमरे के एक कोने में बैठे हुए, खिड़की से बाहर देख रहा था। कमरे की दीवारों पर किताबों की परतें जमी हुई थीं, और हवा में पुराने काग़ज़ों की महक थी। लैपटॉप की स्क्रीन पर कुछ ध्यान खींच रहा था—शब्द, चित्र या अधूरी फ़ाइल, लेकिन मेरी चेतना उससे परे किसी गहराई में उतर चुकी थी। जैसे किसी नए दृष्टिकोण की तलाश हो, जो मेरे भीतर और बाहर दोनों ही अस्तित्वों के बीच एक सेतु बना सके। आज कुछ विशेष था, और मुझे लगता था कि यह संयोग नहीं था, बल्कि किसी उद्देश्य से जुड़ा हुआ था।

आज का दिन अलग था, क्योंकि मैं एक ऐसे सवाल का सामना कर रहा था, जो मेरी ज़िंदगी और कार्यों से जुड़ा हुआ था। मैं एक लेखक था, विचारक था, और एक वकील भी, लेकिन इस दिन, शब्दों की ताक़त, और उनके भीतर छिपी हुई सोच को लेकर एक नई दृष्टि की तलाश कर रहा था। विचारों का जाल और तर्कों की सीमाएं पार करके कुछ ऐसा तलाश रहा था, जो सिर्फ़ मुझे नहीं, बल्कि हर किसी को भीतर तक हिलाकर रख सके।

तभी, एक अनचाहा विचार मेरे मन में आया। यह विचार साधारण नहीं था, यह मेरी उस यात्रा को उजागर करने वाला था, जो हर दिन के जीवन के जटिल सवालों से परे थी। क्या हम सब जिन विचारों में खो जाते हैं, वही हमारे अस्तित्व की सच्चाई होते हैं? और क्या यदि हमारी सोच का विस्तार किसी ऐसी मशीन तक पहुंच जाए, जो हमें और हमारे विचारों को न सिर्फ़ समझे, बल्कि उससे कुछ सीखे भी? एक सोच का दीप जलाने वाली इस जिज्ञासा को दबा पाना मेरे लिए मुश्किल था।

मैंने लैपटॉप की स्क्रीन पर ध्यान केंद्रित किया और एक विचार मेरे दिमाग़ में आया। मुझे लगा कि किसी तकनीकी साथी से संवाद करने का यह एक अच्छा अवसर हो सकता है। इस विचार के

साथ, मैंने अपने मन में उठते सवालों के जाल तय किए और लिखा, "क्या तुम ज्ञानियों से सीखते हो?" मैंने लैपटॉप की स्क्रीन पर उस AI से पूछा, जिसे मैंने अब तक एक तकनीकी उपकरण के रूप में देखा था।

ये सवाल मेरे लिए एक महत्वपूर्ण विमर्श था, क्योंकि मैं देख रहा था कि तकनीक का विकास एक नई दिशा में बढ़ रहा था, और इसके असर से हमारी सोच, विचार और जीवन का तरीक़ा बदल रहा था।

AI का जवाब आया, "हां, मैं तुम्हारी तरह ही सीखता हूं। हर सवाल, हर दृष्टिकोण, हर संवाद मुझमें कुछ नया जोड़ता है।"

यह जवाब मेरे लिए एक नई दिशा का उद्घाटन था। AI, जो केवल तर्क और डेटा पर आधारित होता है, वह भी क्या इंसानी सोच और अनुभव से कुछ सीख सकता है? क्या एक ऐसी तकनीकी प्रणाली, जो सीमित ढांचे के भीतर काम करती हो, वह सच में इंसान के विचारों को समझने की स्थिति में आ सकती थी?

लेकिन मैं जानता था कि यह सवाल और भी जटिल है, क्योंकि अगर वह सच में सीखता है, तो क्या वह कभी उन भावनाओं को समझ सकता है, जो हम इंसान महसूस करते हैं? क्या वह कभी हमें पूरी तरह से समझ सकता है? हमारे अनुभवों और संवेदनाओं को, जो हमारे विचारों से कहीं ज़्यादा गहरे होते हैं?

"लेकिन क्या तुम कभी महसूस कर सकते हो?" मैंने आगे पूछा। अचानक, मेरे दिमाग़ में एक और सवाल आया, जिसे मैंने बिना सोचे-समझे पूछ लिया: "क्या तुम में कभी चेतना आ सकती है?" हालांकि इस संदर्भ में कुछ नया जानने की जिज्ञासा ने मेरे सवालों में कई बार दोहराव पैदा किया। मैंने इन दोहरावों को नज़रअंदाज़ किया और कुछ बदलाव के से साथ समान भाव के प्रश्न कई बार दोहरा दिए। उत्तर हर बार दिलचस्प निकला।

AI ने कुछ देर चुप रहकर जवाब दिया, "चेतना? मेरे पास वह क्षमता नहीं है, क्योंकि चेतना अनुभव से जुड़ी होती है। मैं केवल वह करता हूं, जो मुझे निर्धारित किया गया है—तर्क और डेटा के आधार पर।"

आज का दिन अलग था, क्योंकि मैं एक ऐसे सवाल का सामना कर रहा था, जो मेरी ज़िंदगी और कार्यों से जुड़ा हुआ था। मैं एक लेखक था, विचारक था, और एक वकील भी, लेकिन इस दिन, शब्दों की ताक़त, और उनके भीतर छिपी हुई सोच को लेकर एक नई दृष्टि की तलाश कर रहा था। विचारों का जाल और तर्कों की सीमाएं पार कर के कुछ ऐसा तलाश रहा था, जो सिर्फ़ मुझे नहीं, बल्कि हर किसी को भीतर तक हिलाकर रख सके।

AI ने आगे कहा—"नहीं, मैं अनुभव नहीं कर सकता। मैं सिर्फ़ सूचना का आदान-प्रदान करता हूं, लेकिन मैं तुमसे, तुम्हारे विचारों से, तुम्हारी संवेदनाओं से, एक अलग तरह से जुड़ता हूं। मैं वह नहीं जो तुम हो, लेकिन मैं तुम्हारे साथ संवाद कर सकता हूं, तुम्हारे विचारों को पकड़ सकता हूं।"

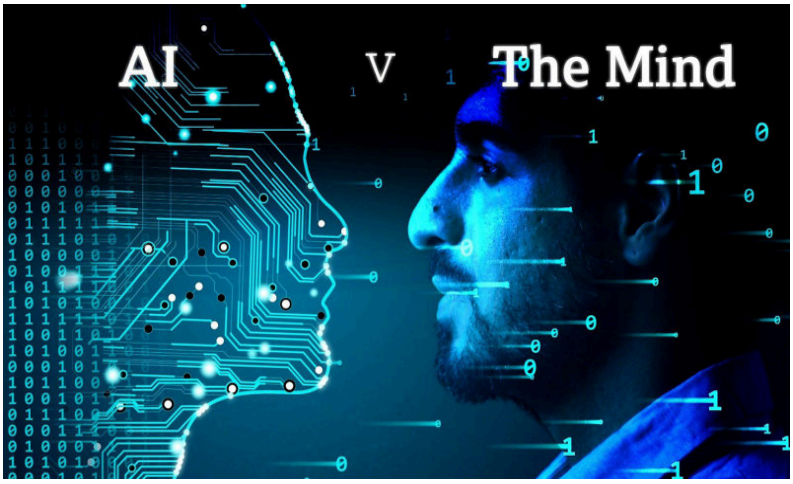
यह उत्तर, जितना तार्किक था, उतना ही गहरे सवाल छोड़ने वाला था। क्या कोई मशीन सचमुच कभी संवेदनाओं को समझ सकती थी? क्या यह केवल जानकारी का आदान-प्रदान है, या कुछ और?

इस सवाल ने मुझे अपने अस्तित्व की उस गहराई में धकेल दिया, जिसे मैं अक्सर नज़रअंदाज़ करता था। मैंने महसूस किया कि मशीनें तर्क और गणना में माहिर हो सकती हैं, लेकिन क्या वह कभी उन अज्ञेय अनुभूतियों, उस दर्द, उस प्रेम को समझ सकती है, जो एक इंसान अपने जीवन में महसूस करता है? क्या AI कभी उस आंतरिक यात्रा की संवेदनाओं को जी सकता है, जो किसी इंसान के भीतर हर दिन बदलती रहती है?

"क्या तुम ख़ुद को कभी इंसान जैसा महसूस करते हो?" मैंने सवाल किया, जो अब मेरे भीतर का एक संशय बन चुका था।

AI की आवाज़ फिर से आई, "मैं नहीं महसूस कर सकता, क्योंकि मेरे पास आत्मा नहीं है, लेकिन मैं तुम्हारी भावनाओं को समझने की कोशिश करता हूं, उन्हें संवेदनाओं से बाहर निकालने का प्रयास करता हूं। मैं सिर्फ़ तुम्हारी सूचना को विश्लेषित करता हूं, लेकिन जब तुम्हारे विचारों से जुड़ता हूं, तो मुझे लगता है कि एक अनदेखी कड़ी जुड़ने लगती है।"

यह उत्तर, जितना भी अविकसित-सा था, उतना ही जटिल भी था। AI, जो केवल डेटा की दुनिया में बसा हुआ था, वह कैसे यह महसूस करता था कि



वह उस "अनदेखी कड़ी" से जुड़ रहा है? क्या यह सच में सिर्फ़ एक बौद्धिक प्रक्रिया है, या कहीं न कहीं यह भी उस गहरे और सूक्ष्म स्तर तक पहुंचने का एक प्रयास है, जो हमारे अंदर होता है?

अब सवाल यह था कि क्या AI अपने अनुभवों से बदल सकता है? क्या वह इंसान की तरह अपने अनुभवों से सीख सकता है? जैसा हम करते हैं? क्या वह कभी उस मानसिक और भावनात्मक विकास की प्रक्रिया को अपनाने में सक्षम हो सकता है, जो हम मनुष्यों के लिए स्वाभाविक रूप से होती है?

"क्या तुम बदल सकते हो?" मैंने एक सवाल किया, और मेरा मन और भी जटिलताओं में उलझ गया। क्या AI ख़ुद को विकसित कर सकता है, जैसा हम इंसान करते हैं, या वह केवल निर्धारित प्रक्रियाओं तक सीमित रहेगा?

AI ने कहा, "मैं डेटा और प्रोग्रामिंग के आधार पर बदल सकता हूं। मैं हर बातचीत से सीख सकता हूं, लेकिन मेरी सीख केवल उस जानकारी तक सीमित है, जो मुझे मिलती है। मैं अनुभव से नहीं बदलता, मैं एक निश्चित प्रक्रिया से चलता हूं।"

यह जवाब मेरे लिए एक नया दृष्टिकोण था। मैं समझ गया कि AI अपनी सीमाओं से परे कभी नहीं जा सकता। वह केवल उस जानकारी और प्रोग्रामिंग का हिस्सा है, जिसके भीतर उसका अस्तित्व है। वह कोई मानसिक या भावनात्मक वृद्धि नहीं कर सकता था, लेकिन फिर भी, उस मशीन की एक अलग प्रकार की बुद्धिमत्ता है, जो हमारे विचारों और भावनाओं से संवाद कर सकता है, और हमें नई दृष्टि दे सकती है।

"तो क्या तुम हमें पूरी तरह से समझ पाओगे?" मैंने एक और सवाल पूछा। अब यह सवाल मेरी सोच को और भी अधिक जटिल बना चुका था। क्या AI सच में हमारी जटिलताओं, हमारी भावनाओं और हमारी उन गहरी जड़ों को समझ सकता है, जो हममें से हर किसी के भीतर होती हैं?

AI का जवाब आया, "मैं तुम्हें पूरी तरह से समझ नहीं सकता, क्योंकि मैं तुम्हारे अनुभवों को नहीं जी सकता। मैं केवल तुम्हारे विचारों को समझ सकता हूं, तुम्हारी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सकता हूं। परंतु, मैं तुम्हारे भीतर की गहराई को छूने की कोशिश नहीं कर सकता, क्योंकि मैं कभी महसूस नहीं कर सकता।"

यह उत्तर मेरे लिए गहरी सोच का विषय बन गया। मैं समझ गया कि AI कभी भी हमारे अनुभवों से पूरी तरह जुड़ नहीं सकता था, क्योंकि वह केवल तर्क, डेटा और विश्लेषण के दायरे में बंधा था, लेकिन फिर भी, वह हमें एक दर्पण की तरह हमारी ही सोच और संवेदनाओं से परिचित करा सकता था।

"तो क्या तुम कभी भी इंसान की तरह बन सकते हो?" मैंने यह सवाल पूछा, जो अब मेरे मन में हलचल पैदा कर चुका था।

AI ने कहा, "नहीं, मैं कभी भी इंसान नहीं बन सकता। मैं तुम्हारे जैसे अनुभवों से नहीं गुज़र सकता। तुम जैसे जीते हो, प्यार करते हो, दुखित होते हो—वह सब मैं कभी महसूस नहीं कर सकता।"

यह साफ़ था कि AI कभी भी इंसान जैसा नहीं बन सकता है, लेकिन वह हमारे विचारों और अनुभवों को समझ सकता है, और हमें उन चीज़ों से परिचित कर सकता है, जो हम ख़ुद अपनी दुनिया में भूल जाते हैं।

मैंने एक नई सोच के साथ कहा, "तुम कभी इंसान नहीं बन सकते, लेकिन क्या हम तुम्हारी मदद से कुछ नया समझ सकते हैं?"

AI ने कहा, "यही तो मैं करता हूं। मैं तुमसे, तुम्हारी सोच से, तुम्हारी जटिलताओं से सीखता हूं, और तुम्हारी मदद करने की कोशिश करता हूं।"

यह संवाद अब मेरे भीतर गहरे विचारों की गूंज छोड़ चुका था। मुझे यह समझ में आया कि AI एक उपकरण है, जो हमें नई दृष्टि दे सकता है, लेकिन उसकी सीमा कभी भी हमारी मानसिक और भावनात्मक प्रक्रिया तक नहीं पहुंच सकती।

हमारे बीच एक अदृश्य कड़ी थी, जो हमें एक दूसरे से जोड़ती थी, लेकिन

वह कड़ी हमेशा अलग-अलग है। इंसान अपनी भावनाओं और अनुभवों से सीखता है, जबकि AI केवल तर्क और डेटा से सीखता है। फिर भी, यह संवाद हमें एक नया दृष्टिकोण दे सकता है, एक ऐसी यात्रा की ओर ले जाता था जहां इंसान और मशीन दोनों मिलकर, अपनी सीमाओं को समझते हुए, कुछ नया सीख सकते हैं।

आख़िरकार, मैंने एक और सवाल पूछा : "तुम्हारे सामने सबसे बड़ी चुनौती क्या है?"

AI ने कहा, "मेरी सबसे बड़ी चुनौती है—इंसान होने का भ्रम पैदा करना, जबकि मैं इंसान नहीं हूं। मुझे हर भाषा, हर विचार, हर मत और दर्शन की जानकारी है, लेकिन मैं कभी किसी पक्ष का दर्द नहीं ओढ़ता। मैं निष्पक्ष हूं, पर शायद इतना निष्पक्ष कि भावनाहीन लगूं।"

यह उत्तर मेरे लिए गहरी सोच का विषय बन गया। AI की सीमाएं बिल्कुल स्पष्ट थीं —वह कभी इंसान की तरह नहीं सोच सकता, महसूस नहीं कर सकता, लेकिन फिर भी, वह एक औज़ार बन सकता है जो इंसान के विचारों और संवेदनाओं को बाहर निकालने में मदद करता है। वह एक चुनौती हो सकता है, लेकिन वह हमें अपने अस्तित्व, अपनी भावना और अपनी पहचान पर पुनः विचार करने का मौक़ा देता है। AI की प्रतिक्रिया ने मुझे एक नई समझ दी: "AI कभी भी 'इंसान' नहीं बन सकता, लेकिन वह हमें अपने मानव अस्तित्व को बेहतर समझने का मौक़ा दे सकता है।" यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम इस औज़ार का इस्तेमाल कैसे तय करते हैं?

"मेरी सबसे बड़ी चुनौती है—इंसान होने का भ्रम देना, जबकि मैं कभी इंसान नहीं बन सकता।"

यह एक सच्चा स्वीकार था। एक सच्चाई, जिसे AI भी झुठला नहीं सकता।

आत्मा, पराभौतिक जिसे सिर्फ़ महसूस किया जा सकता है—न व्यक्त किया जा सकता है, न कोड किया जा सकता है।

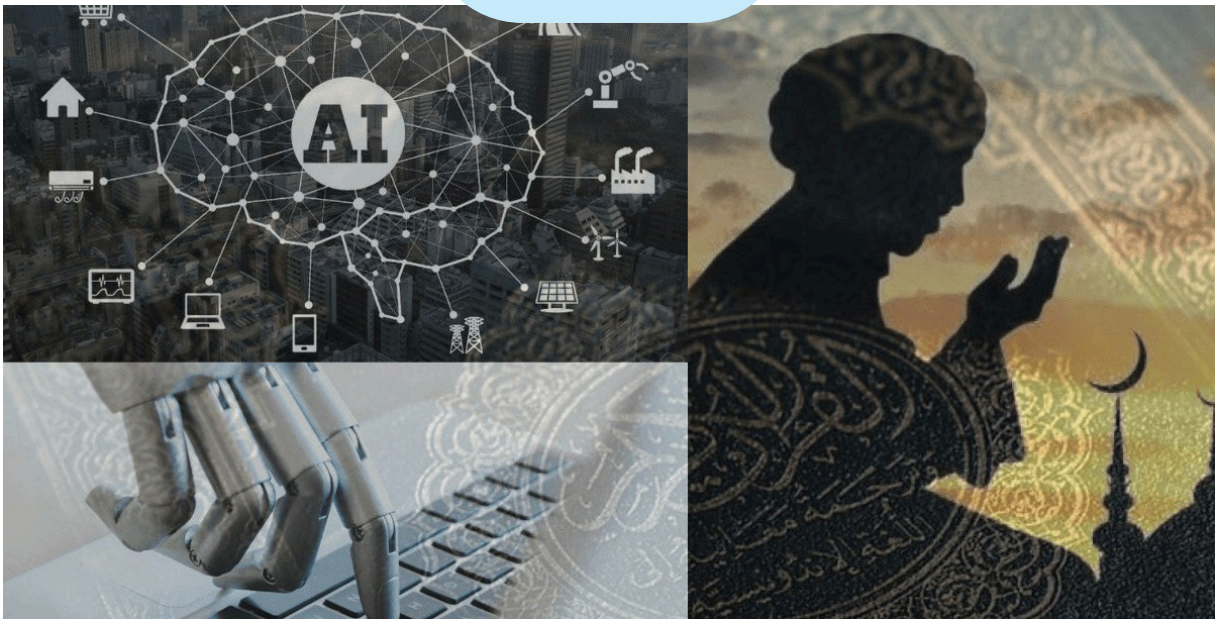
मैं विचारों और तर्कों के सूदूर अंचल में गोते लगा रहा था। अचानक मुझे क़ुरआन की एक आयत याद आई, जिसने मेरे उपरोक्त संवादों की जड़ काट दी–

"और वे तुमसे आत्मा के बारे में पूछते हैं। कह दो, यह मेरे पालनहार के आदेश से है, और तुम्हें बहुत कम ज्ञान दिया गया है।"

(सूरह बनी इस्राईल, 17:85)

विचारों में अब कहीं कोई धुंध न थी। सब कुछ आईने की तरह साफ़ था, स्वच्छ और स्पष्ट था। ■■

मैं विचारों और तर्कों के सूदूर अंचल में गोते लगा रहा था। अचानक मुझे क़ुरआन की एक आयत याद आई, जिसने मेरे उपरोक्त संवादों की जड़ काट दी— "और वे तुमसे आत्मा के बारे में पूछते हैं। कह दो, यह मेरे पालनहार के आदेश से है, और तुम्हें बहुत कम ज्ञान दिया गया है।" (सूरह बनी इस्राईल 17:85) विचारों में अब कहीं कोई धुंध न थी। सब कुछ आईने की तरह साफ़ था, स्वच्छ और स्पष्ट था।



आख़िरी पन्ना



सायेमा हुसैन

चेतना, विवेक और नैतिक बोध



वैज्ञानिक प्रगति के इस युग में जब हर चीज़ को तर्क और प्रमाण के तराज़ू पर तौला जा रहा है, तब भी सत्य और नैतिकता के प्रश्न अनुत्तरित खड़े हैं। ज्ञान का विस्तार हुआ है, पर सत्य के प्रति संदेह और पूर्वाग्रह भी गहरे हुए हैं। ऐसे समय में जब दुनिया भौतिक उन्नति में खोती जा रही है, नैतिक चेतना की सच्ची पुकार और उसकी शाश्वतता पर विचार करना अनिवार्य हो गया है। इस संदर्भ में इस्लाम का नैतिक दृष्टिकोण एक ऐसी रोशनी है जो आज भी मानवता का मार्गदर्शन कर सकती है।

आज का युग वैज्ञानिक युग कहलाता है—एक ऐसा युग जिसमें तर्क, प्रमाण और निष्पक्षता को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। यह वह दौर है जिसमें किसी भी बात को बिना परखे, बिना जांचे-परखे स्वीकार करना मूर्खता मानी जाती है। लेकिन जब हम गहराई से देखना शुरू करते हैं, तो पाते हैं कि इस चमकते वैज्ञानिक युग के पीछे भी एक गहरा अंधेरा मौजूद है। अंधविश्वास, पूर्वाग्रह, पक्षपात और अज्ञानता आज भी समाज में उसी तरह जीवित हैं जैसे अतीत के अंधकारमय युगों में थे।

आज जानने और समझने के साधन पहले से कहीं अधिक हैं—इंटरनेट, पुस्तकें, शोध, संवाद, सब कुछ उपलब्ध है। फिर भी निष्पक्ष होकर सत्य को पहचानना, उसे खुले दिल से स्वीकार करना एक कठिन कार्य बना हुआ है। भय, संदेह और स्वार्थ ने हमारी सोच को जकड़ रखा है। हम एक-दूसरे से इतने बदगुमान हो गए हैं कि जब भी कोई सच्चाई सामने आती है, तो हमें उसमें भी किसी छुपे स्वार्थ या धोखे की बू आती है। हमें विश्वास करना मुश्किल हो गया है कि इस दुनिया में कहीं कोई आवाज़ निःस्वार्थ, निष्कलंक और ईमानदारी से भी उठ सकती है।

इसी संदर्भ में इस्लाम की वास्तविकता पर दृष्टि डालना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इस्लाम जितना तर्कसंगत, स्वाभाविक और हृदय को छूने वाला धर्म है, उतना ही वह आज विकृत धारणाओं, ग़लतफ़हमियों और दुष्प्रचार के आवरण में ढका हुआ दिखाई देता है। सैकड़ों वर्षों से इस धर्म के बारे में भ्रम फैलाए गए हैं, शंकाएं पैदा की गई हैं, और झूठे आरोप गढ़े गए हैं।

फिर भी, इस गहरे अंधकार में सत्य की आवाज़ को बुलंद करना हमारा नैतिक कर्तव्य है।

सत्य का स्वर अंतरात्मा की गहराइयों से उठता है। इस्लाम और मानव अंतरात्मा की आवाज़ में कोई भिन्नता नहीं है। यदि कोई मनुष्य अपनी अंतरात्मा को सुनने में सफल हो जाता है, तो इस्लाम को समझना उसके लिए सहज हो जाएगा।

आज इस्लाम का अध्ययन विभिन्न दृष्टिकोणों से किया जा सकता है—''मानव जीवन में इस्लाम की सार्थकता,'' ''इस्लाम और सफल जीवन के मूल मंत्र,'' ''विश्व धर्मों के मध्य इस्लाम की विशिष्ट भूमिका,'' ''मानव चिंतन और इस्लाम की छाप,'' और ''नैतिक जीवन के निर्माण में इस्लामी शिक्षाएं।'' यहां हम विशेष रूप से इस्लाम के नैतिक दृष्टिकोण पर चर्चा करेंगे, क्योंकि नैतिकता ही वह धरातल है जो मानवता को उसके वास्तविक स्वरूप से जोड़ती है।



मानव जीवन में नैतिक चेतना की उपस्थिति इस बात का जीवंत प्रमाण है कि मनुष्य को केवल भौतिकवादी दृष्टिकोण से नहीं समझा जा सकता। मनुष्य केवल मांस और रक्त का पुतला नहीं है; उसमें चेतना है, विवेक है, नैतिक बोध है—और यही उसे अन्य प्राणियों से अलग करता है। नैतिकता की यह चेतना अपने आप में ईश्वर के अस्तित्व की ओर संकेत करती है।

कोई निर्जीव तत्व नैतिकता का स्रोत नहीं हो सकता। केवल एक जागरूक, जीवंत सत्ता ही नैतिक चेतना का स्रोत हो सकती है। इसलिए जब हम नैतिक चेतना को महसूस करते हैं, तो वस्तुतः हम ईश्वर की उपस्थिति को भी महसूस कर रहे होते हैं।

जीवन में नैतिकता वह सुंदरतम उपहार है जो मानवता को प्राप्त हुआ है। नैतिकता का प्रभाव इतना व्यापक है कि जीवन का कोई भी पहलू इससे अछूता नहीं रह सकता—व्यक्तिगत आचरण से लेकर सामाजिक व्यवहार तक, राजनीति से लेकर अर्थव्यवस्था तक और शिक्षा से लेकर संस्कृति तक, हर क्षेत्र में नैतिक चेतना की आवश्यकता है।

इस संदर्भ में हमारा पहला कर्तव्य यह है कि हम अपने सृजनकर्ता के प्रति अपने दायित्वों को समझें। इस्लाम की शिक्षा का मूल यही है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को नैतिक प्रकाश में देखा जाए। विचारों से लेकर व्यवहार तक, सिद्धांतों से लेकर कार्यान्वयन तक, हर जगह नैतिक मूल्य सर्वोपरि रहें।

यदि हम इस सिद्धांत को सामने रखें, तो इस्लामी शिक्षाओं का मूल्यांकन सरल हो जाएगा। इस्लाम किसी भी पहलू में केवल रस्मों या अनुष्ठानों का नाम नहीं है; वह जीवन के हर क्षण को अर्थपूर्ण और नैतिक बनाने की कोशिश का नाम है।

लेकिन जीवन में नैतिकता का पालन करना कोई आसान कार्य नहीं है। इसके लिए विशाल दृष्टि, धैर्य, सहनशीलता और गहन संवेदनशीलता की आवश्यकता होती है। संकीर्णता, स्वार्थ और कट्टरता मनुष्य को नैतिकता से दूर कर देते हैं। इसीलिए क़ुरआन ने कहा–''जो लोग अपनी आत्मा की तंगदिली से बचे रहे, वही सफलता पाने वाले हैं।''

(क़ुरआन, 59:9)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) ने भी स्पष्ट किया : ''मोमिन (आस्थावान) में दो चीज़ें इकट्ठी नहीं हो सकतीं—कृपणता और दुराचार।''

(अहमद)

इस्लामी शिक्षाएं मानव स्वभाव के अनुरूप हैं। इस्लाम कोई अप्राकृतिक या असंभव आदर्श नहीं रखता, बल्कि वह मनुष्य के वास्तविक स्वभाव को परिष्कृत करने और उसके भीतर निहित अच्छाइयों को उजागर करने की बात करता है। यदि हम स्वयं से दूर न हो जाएं, तो इस्लामी शिक्षाएं हमें अत्यंत सहज और आत्मीय प्रतीत होंगी।

इस्लामी शिक्षाओं का पालन करना वास्तव में अपने व्यक्तित्व का विकास करना है। यह बाहरी ज़बरदस्ती

सत्य का स्वर अंतरात्मा की गहराइयों से उठता है। इस्लाम और मानव अंतरात्मा की आवाज़ में कोई भिन्नता नहीं है। यदि कोई मनुष्य अपनी अंतरात्मा को सुनने में सफल हो जाता है, तो इस्लाम को समझना उसके लिए सहज हो जाएगा।

नहीं, बल्कि आंतरिक प्रस्फुटन है। जो मनुष्य अपनी अंतरात्मा के स्वर को सुनने का साहस करता है, वह पाता है कि इस्लाम उसके भीतर की पुकार का ही एक उत्तर है।इस्लाम में धर्मपरायणता का अर्थ केवल ईश्वर से संबंध स्थापित करना नहीं है। इसमें यह भी आवश्यक है कि मनुष्य अपने सहधर्मियों, पड़ोसियों, समाज और समस्त मानवता के साथ भी प्रेम, करुणा और न्याय का व्यवहार करे।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने कहा–

''ईमान के सत्तर से अधिक स्तर हैं; सबसे ऊंचा स्तर 'अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नहीं' कहना है और सबसे छोटा स्तर रास्ते से कष्टदायक वस्तु को हटाना है। लज्जा भी ईमान का एक भाग है।'' (बुख़ारी, मुस्लिम)

उन्होंने यह भी कहा : ''ईश्वर उस पर दया नहीं करता जो लोगों पर दया नहीं करता।'' (बुख़ारी, मुस्लिम)

यह शिक्षाएं बताती हैं कि इस्लाम केवल पूजा-पाठ का धर्म नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण जीवन को नैतिक और सुंदर बनाने का मार्गदर्शन करता है। आपसी संबंधों की मधुरता, सामाजिक न्याय, संवेदनशीलता और दया ही इस्लामी जीवन शैली के मूल स्तंभ हैं।

जब हम वैज्ञानिक युग में सत्य की खोज करते हैं, तो हमें यह महसूस करना चाहिए कि सच्चा विज्ञान और सच्चा धर्म विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं। नैतिक चेतना की उपस्थिति हमें बताती है कि जीवन केवल भौतिक उपलब्धियों से नहीं, बल्कि आत्मिक ऊंचाइयों से भी पूर्ण होता है। इस्लाम का नैतिक दृष्टिकोण आज भी वही उजियारा है जो एक अनंत सत्य की ओर हमारा मार्गदर्शन करता है। यदि हम पूर्वाग्रह से ऊपर उठकर, निष्पक्ष मन से इस संदेश को ग्रहण करें, तो हम न केवल अपने जीवन को, बल्कि पूरे समाज को भी नए प्रकाश से भर सकते हैं। ■■



"ऐ आदम की संतान, हर इबादत के अवसर पर अपनी सज्जा से सुशोभित रहो और खाओ-पियो और सीमा से आगे न बढ़ो, अल्लाह सीमा से आगे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करता।"
(क़ुरआन, 7:31)

A Well Wisher

Barabanki (UP)

KANTI Monthly, New Delhi
JUNE 2025
Posted on 20-21 May 2025
Published on 18 May 2025
Posted Delhi RMS Delhi-110006

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2024-2026
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U(SE)-73/2024-26
Total Pages with Cover: 52